शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 4 अंक : 7   1 फरवरी 2012

(माघ-फाल्गुन, विक्रम संवत् 2068)

मार्गदर्शक

मुकुन्द कुलकर्णी

प्रो.के.नरहरि

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

❑

सम्पादक

सन्तोष पाण्डेय

❑

सम्पादक मण्डल

सपन समद्दर चौधरी

एच. नागभूषण राव

बजरंग प्रसाद मजेजी

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

भरत शर्मा

❑

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❑

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल 09414716585

प्रकाशकीय कार्यालयः
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरध्वनी 9414040403

शैक्षिक महासंघ सदन 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष: 011-22914799

Website
www.shaikshikmanthan.com
E-mail:
abrsmdelhi@rediffmail.com
shaikshikmanthan@gmail.com

एक प्रति 10/-
वार्षिक शुल्क 120/-
आजीवन (दस वर्ष) 1000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक
में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल
का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शिक्षा की दरकती बुनियाद

देश की आजादी के बाद हमारा यह स्वप्न था कि यहां बुनियादी शिक्षा अपने राष्ट्र की जड़ों से जुड़ते हुए अपने स्वदेशी मूल्यों, संस्कारों व परंपराओं का पोषण करेगी, परंतु यहां राष्ट्रीय विकास के लिए जिस विदेशी मॉडल का अनुकरण किया गया उससे हमारी मातृभाषा से जुड़ी प्राथमिक शिक्षा पृष्ठभूमि में चली गई और मैकाले शिक्षा पद्धति से जुड़ी अंग्रेजी शिक्षा आत्म सम्मान का साधन बन गई।

6

ये शिक्षा के बीमारू राज्य

चूंकि शिक्षा के क्षेत्र में राज्य सरकार की भूमिका बहुत बड़ी है और अभी तक शिक्षा को लेकर जनमत इतना प्रबल नहीं हुआ है कि सरकारें उससे प्रभावित हों लिहाजा लगातार शिक्षा को लेकर सरकारी उदासीनता बनी हुई है। यहां तक कि उत्तर प्रदेश और बिहार ऐसे राज्य हैं जहां अभावग्रस्त लोगों के मतों से सरकारें बनती हैं, उनके यहां भी यह उदासीनता विकराल रूप से है।

10

अनुक्रम

4. प्राथमिक शिक्षा : पिछड़ने में 'प्रथम'
8. आरटीई को लागू करने की चुनौती
12. Aser Report : Beyond The Truth
13. Reading, maths ability ....
14. Drop in learning level in ....
16. Mal-nutrition Education Link
21. Action for Girl's education
22. अनुकरणीय शिक्षत्व के धनी श्री गुरुजी
24. आने वाले कल की शिक्षा
26. समान शिक्षा का सवाल
28. विज्ञान में क्यों पिछड़ रहा है भारत
30. पिछड़ता भारतीय विज्ञान
31. उच्च शिक्षा का निम्न स्तर
33. क्यों पिछड़ रहा है भारतीय विज्ञान
35. समाचार

The crisis in learning

The growing body of empirical evidence shows that the increased expenditures in education are not translating into better outcomes. Yet, the Central government remains steadfastly focused on inputs and outputs and does not seem able or willing to bring issues of children's learning to the centre of the stage either in policy or in practice.

18

प्राथमिक शिक्षा : पिछड़ने में 'प्रथम'

 सन्तोष पाण्डेय

देश में सभी को शिक्षित करने की दिशा में भारी प्रयास किये जा रहे हैं। सर्व शिक्षा अभियान, निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा की वैधानिक व्यवस्था, मध्याह्न भोजन योजना, पोष्टिक पोषाहार योजना व अनेक प्रकार की अन्यान्य योजना में इस महत्वाकांक्षी लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में सकारात्मक तथा श्लाघनीय प्रयास हैं। इन सभी पर निरन्तर भारी धन राशि व्यय की जा रही है। निसंदेह इनसे स्कूलों में नामांकन बढ़ा है। स्कूलों से ड्राप आउट्स, विशेषकर लड़कियों की ड्रापआउट रेट में गिरावट एक स्वस्थ्य संकेत है। स्कूलों में भौतिक सुविधाओं यथा खेल के मैदान की व्यवस्था प्रयोगशालायें, पुस्तकालयों, शौचालयों की व्यवस्था तथा लड़कियों के लिये पृथक शौचालय की बढ़ती संख्या दिशा के सही होने के संकेत हैं। परन्तु जहाँ तक शिक्षा की गुणवत्ता का प्रश्न है, निश्चित रूप से संकेत सन्तोषजनक नहीं है। हाल ही में अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिवेदन सामने आये हैं। इन सभी से एक ही बात उभर कर आती है। कि शिक्षा के स्तर में अनवरत गिरावट आ रही है और भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि केन्द्र व राज्य सरकारों के स्तर पर यह आभास भी नहीं होता है कि इस निरन्तर गिरते स्तर को रोकने के लिये गंभीर प्रयास किये जा रहे हैं।

हाल ही में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (ओईसीडी) ने एक अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थी मूल्यांकन कार्यक्रम (पीआईएसए) के अन्तर्गत एक प्रतियोगी जाँच परीक्षा आयोजित की जिसमें 73 देशों के छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। भारत ने भी अपने शिक्षा की दृष्टि से अग्रणी राज्यों जहाँ शिक्षा की व्यवस्था व स्तर अन्य राज्यों की अपेक्षा अच्छा माना जाता है, हिमाचल प्रदेश व तमिलनाडु से प्रतिभागियों का चयन किया। 15 वर्ष की आयु के छात्रों से पढ़ने के स्तर, गणित व विज्ञान से संबंधित प्रश्न पूछे गये। भारत जिसमें गणित के स्तर से अमरीका व इंगलैंड चिन्तित रहते हैं, इस मूल्यांकन परीक्षा में 73 देशों में 72 वाँ स्थान प्राप्त हुआ। मात्र किर्गिस्तान जैसे देश से ही भारत कुछ ऊपर रह पाया। उल्लेखनीय है कि इस मूल्यांकन परीक्षा में भारत के परंपरागत प्रतिद्वंद्वी चीन के छात्रों ने पढ़ने, गणित व विज्ञान तीनों ही क्षेत्रों में प्रथम स्थान प्राप्त किया। अपेक्षा तो यह थी कि अच्छी शिक्षा व्यवस्था वाले राज्य से चुने गये ये छात्र भारत की शिक्षा व विकास का उजला चेहरा विश्व को दिखा पायेंगे। यह आसानी से सोचा जा सकता है कि जब अच्छी शिक्षा व्यवस्था वाले राज्य का यह हाल है, तो शेष राज्य विशेषकर शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े राज्यों में शिक्षा का स्तर कैसा होगा। यह प्रत्येक भारतीय को झकझोरने वाला तथ्य है।

दूसरा प्रतिवेदन अहमदाबाद स्थित एजूकेशनल इनीशियेटिव (ईआई) ने शोध के पश्चात तैयार 'गुणवत्ता शिक्षा अध्ययन' (Quality Education Study) को

संपादकीय

जारी किया है। इस अध्ययन में देश के पाँच महानगरों में विद्यमान वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य को जाँचने परखने का प्रयास किया गया। इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य समझने व हृदयंगम करने (under standing) के साथ-साथ सीखने (Learning) को प्रेरित करना था। अर्थात सीखने व समझने के बीच के संबंध को प्रेरित करना था। स्मरणीय है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभिप्राय: प्रथम तो गुणवत्तापूर्ण सीखने के वातावरण तथा द्वितीय छात्रों के संपूर्ण विकास (Holistic Development) से होता है। इस अध्ययन के उद्देश्य भी दूरगामी व महत्त्वपूर्ण हैं। प्रथम निष्कर्ष है कि 2006 में किये गये ऐसे ही अध्ययन की तुलना में छात्रों में सीखने (Learning) का स्तर गिरा है। छात्रों ने प्रक्रियात्मक तथा गहन समझने की आवश्यकता नहीं वाले प्रश्नों के उत्तर अपेक्षाकृत सरलता से दिये। अध्ययन में लैंगिक समानता, अन्य के प्रति संवेदनशीलता नागरिक एवं नागरिकता से जुड़े प्रश्नों तथा अन्तर्वैश्विक संबंधों की क्षमता को भी आंकने का प्रयास किया गया है। यह सामाजिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आया है कि चौथी, पाँचवी व सातवीं कक्षा के 43 प्रतिशत छात्र पारिवारिक दायित्वों में लड़कियों की भूमिका को महत्वपूर्ण नहीं मानते हैं। यह लड़कियों के प्रति सदियों से चले आ रहे दृष्टिकोण का ही परिचायक है। अति उच्च रूप से शिक्षित परिवारों के छात्रों ने भी ऐसी धारणा प्रकट की। यहाँ भी यह प्रकट हुआ कि गणित, विज्ञान तथा रीडिंग लिटरेसी में भारत के श्रेष्ठतम स्कूलों के छात्र अन्तर्राष्ट्रीय औसत से कहीं पीछे रहे। विभिन्न शिक्षा बोर्डों तथा शहरों में शिक्षा पा रहे छात्रों के प्रदर्शन में अन्तर पाया गया। सीआईएससीई तथा सीबीएसई के छात्रों को प्रदर्शन अपेक्षाकृत बेहतर रहा है। शोध अध्ययन में छात्रों में मानचित्र (Maps) पढ़ने के ज्ञान व कला तथा लेख व माप-तौल व सामान्य वातावरण की जानकारी भी अपूर्ण पायी। इन स्कूलों में कुल समय का 9-10 प्रतिशत भाग ही खेलकूद व अन्य सहपाठ्य प्रवृत्तियों जैसे संगीत, कला, नृत्य, ड्रामा व तत्काल भाषण कला पर लगाया जाता है। एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह भी सामने आया कि कड़े अनुशासन वाले छात्रों का शैक्षिक प्रदर्शन अपेक्षाकृत कम रहा। शोध भारत के शैक्षिक सुविधाओं से परिपूर्ण महानगरों में भी छात्रों के चिन्ताजनक प्रदर्शन को रेखांकित करता है।

भारत का ही एक गैर सरकारी संगठन 'प्रथम' प्रति वर्ष व्यापक सर्वे के पश्चात् भारत में स्कूली शिक्षा की स्थिति पर रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। यह असर (ASER) के नाम से जाना जाता है। 'प्रथम' का दावा है कि उसका सर्वे भारत का शिक्षा में सबसे बड़ा सर्वे है। जबकि शैक्षिक योजना व प्रशासन के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय द्वारा देश के प्रत्येक जिलेवार रिपोर्ट कहीं अधिक व्यापक व वृहद आंकड़े व चित्र उपलब्ध कराता है। इससे प्रथम के प्रयास को कमतर करके नहीं आंका जा सकता है। प्रथम ने हाल ही में एन्यूअल सर्वे ऑफ एजूकेशन पर सातवीं रिपोर्ट 2011 प्रकाशित की है, जिसे मानव संसाधन विकास मंत्री श्री कपिल सिब्बल ने जारी किया है, में शिक्षा के स्तर में गिरावट का भयावह चित्र प्रस्तुत किया गया है। सर्वे भी छात्रों में पढ़ने व गणित में

गिरती प्रवृत्ति की पुष्टि करता है। 2006 के पश्चात् गिरावट अधिक आयी है। रिपोर्ट में कक्षा पांच की पढ़ने व गणित के सवाल हल कर सकने की योग्यता की तुलना 2010 व 2011 से की गई है। पाँचवीं के छात्रों की पढ़ने की क्षमता तीव्र रूप कम हुई है। 2010 में पाँचवीं कक्षा के 53.7 प्रतिशत छात्र कक्षा दो की पाठ्य पुस्तक पढ़ने में समर्थ थे, वहीं 2011 में पढ़ने की यह क्षमता 48.2 प्रतिशत ही रह गई। अर्थात् बहुसंख्यक छात्र कक्षा दो की पाठ्यपुस्तक पढ़ने के योग्य नहीं थे। देश के उत्तर क्षेत्रीय राज्यों में गिरावट तीव्र रही। जबकि पंजाब, गुजरात व तमिलनाडु की अपेक्षाकृत स्थिति ठीक रही। गणितीय क्षमता का देश भर में तीव्र ह्रास हुआ है। राष्ट्रीय स्तर पर तीसरी कक्षा के छात्र दो अंकों की राशि में घटाने की क्रिया करने में असमर्थ थे। 2010 में 36.3 प्रतिशत छात्र यह क्रिया करने में समर्थ थे, परन्तु 2011 में यह सामर्थ्य 29.9 प्रतिशत छात्रों में ही पायी गई। पाँचवीं कक्षा के छात्रों में भी दो अंकों में घटाने की क्रिया करने की सामर्थ्य जो 2010 में 70.9 प्रतिशत थी जो 2011 में घटकर 62 प्रतिशत रह गई। यह स्थिति निश्चित ही चिन्ताजनक है जिस पर अविलम्ब ध्यान दिया जाना आवश्यक है। श्री कपिल सिब्बल तो इस असफलता का समस्त दोष राज्य सरकारों पर डालकर चिन्तामुक्त हो गये। उन्होंने राज्यों को प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अधिक सक्रियता से कार्य करने की सीख दी है। प्रथम के एन्यूअल सर्वे ऑफ एजूकेशन की 7वीं रिपोर्ट, शिक्षा में प्रगति के कुछ शुभ संकेत भी देती है। देशभर में 6-14 वर्ष की आयु के 96.7 प्रतिशत बालक-बालिकाओं का स्कूल जाना उत्साहवृर्द्धक है। ड्राप-आउट की दर को भी रोकने में सफलता मिली है। उत्साहवर्द्धक बात यह है कि लड़कियों का नामांकन प्रतिशत 2010 में 83.7 प्रतिशत से बढ़कर 94.8 प्रतिशत हो गया। इस उपलब्धि में बिहार 95.5 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल व छत्तीसगढ़ 95.7 प्रतिशत ने विशेष सफलता प्राप्त की है। 2006 में इन राज्यों में यह प्रतिशत 90 ही था। उत्तर प्रदेश अभी भी इस दृष्टि से पिछड़ रहा है। 2006 में यह 90.3 प्रतिशत था वह घटकर 88.9 प्रतिशत ही रह गया। एक अन्य सकारात्मक बात यह है कि 5 वर्ष के आयु के बच्चों के स्कूल जाने का

15 वर्ष की आयु के छात्रों से पढ़ने के स्तर, गणित व विज्ञान से संबंधित प्रश्न पूछे गये। भारत जिसमें गणित के स्तर से अमरीका व इंगलैंड चिन्तित रहते हैं, इस मूल्यांकन परीक्षा में 73 देशों में 72 वाँ स्थान प्राप्त हुआ। मात्र किर्गिस्तान जैसे देश से ही भारत कुछ ऊपर रह पाया। अच्छी शिक्षा व्यवस्था वाले राज्य से चुने गये ये छात्र भारत की शिक्षा व विकास का उजला चेहरा विश्व को दिखा पायेंगे। प्रथम ने हाल ही में एन्यूअल सर्वे ऑफ एजूकेशन पर सातवीं रिपोर्ट 2011 प्रकाशित की है, जिसे मानव संसाधन विकास मंत्री श्री कपिल सिब्बल ने जारी किया है, में शिक्षा के स्तर में गिरावट का भयावह चित्र प्रस्तुत किया गया है। सर्वे भी छात्रों में पढ़ने व गणित में गिरती प्रवृत्ति की पुष्टि करता है। 2006 के पश्चात् गिरावट अधिक आयी है।

प्रतिशत बढ़ा है। राष्ट्रीय स्तर पर यह 57.8 प्रतिशत है, राज्यों में इस पर भारी भिन्नता पायी गयी है। यह नागालैण्ड में 87.10 प्रतिशत था तो कर्नाटक में 18.8 ही था।

असर की रिपोर्ट से अनेक अन्य प्रवृत्तियां भी प्रकट हुई हैं। इनमें प्रमुख शिक्षा में निजी स्कूलों का बढ़त तथा निजी ट्यूशन की बढ़ती प्रवृत्ति है। राष्ट्रीय स्तर पर निजी स्कूलों में पढ़ने वालों का प्रतिशत 25.5 रहा है। 2006 में 18.7 प्रतिशत ही निजी स्कूलों में जाते थे। केरल व मणिपुर में निजी स्कूलों में पढ़ने वालों का प्रतिशत 60 था। हरियाणा, उत्तर प्रदेश, नागालैण्ड, मेघालय, पंजाब, जम्मू व कश्मीर, राजस्थान, उत्तराखण्ड, महाराष्ट्र व आन्ध्र प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों के 30 से 60 प्रतिशत छात्र निजी स्कूलों में पढ़ रहे थे। परन्तु चिन्ताजनक यह है कि छात्रों की उपस्थिति 2007 में 73.4 प्रतिशत से घटकर 2011 में 71.9 प्रतिशत रह गई। बिहार में गिरावट तीव्र रही है। यह 2007 में 59 प्रतिशत से घटकर 2011 में 50 प्रतिशत रह गई। मध्यप्रदेश में यह 67 प्रतिशत (2007) से घटकर 54.5 प्रतिशत (2011) तथा उत्तर प्रदेश में 64.4 प्रतिशत (2007) से घटकर 57.3 प्रतिशत (2011) रह गई परन्तु शिक्षकों की उपस्थिति 87 प्रतिशत रही। गुजरात में यह 95.6 प्रतिशत थी। उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कम्प्यूटर का उपयोग बढ़ा है। यह एक अच्छा संकेत है लगभग एक तिहाई (30.8 प्रतिशत) उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कम्प्यूटर विद्यमान थे। केरल (78.4 प्रतिशत) तथा तमिलनाडु में (51.1 प्रतिशत) में इनका उपयोग हो रहा था। गुजरात (31 प्रतिशत) तथा महाराष्ट्र (30.6 प्रतिशत) में उपयोग अपेक्षाकृत कम था। परन्तु सरकारी प्राथमिक विद्यालय (7.9 प्रतिशत) बहुत ही पीछे हैं। केरल एक मात्र अपवाद रहा जहाँ यह प्रतिशत 78.5 प्रतिशत रहा।

प्राथमिक शिक्षा पर विभिन्न रिपोर्टों से स्पष्ट है कि भारतीय प्रतिभाओं ने आईसीटी के क्षेत्र में भले ही उल्लेखनीय विश्वव्यापी ख्याति पाई हो,परन्तु बड़ी जनसंख्या को गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्रदान करने में असमर्थ ही नहीं रहा है, वरन इसमें उत्तरोत्तर गिरावट ही दिखायी देती है। सरकार ने शिक्षा के प्रसार व प्रचार के लिये सर्वशिक्षा अभियान पर भारी व्यय किया है। यह 2005-06 में 7166 करोड़ से बढ़कर 21000 करोड़ पर पहुँच चुका है। साथ में नि:शुल्क व अनिवार्य शिक्षा अधिनियम के माध्यम से 6-14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को शिक्षा देने का लक्ष्य है। शिक्षा के प्रति समाज के दृष्टिकोण में परिवर्तन अति आवश्यक है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने में छात्रों की मूल्यांकन व्यवस्था महत्वपूर्ण भाग अदा करती है, मूल्यांकन व्यवस्था महत्वपूर्ण भाग अदा करती है, मूल्यांकन व्यवस्था ऐसी होनी चाहिये जो छात्र की छिपी प्रतिभा को उजागर कर सके। आज की मूल्यांकन व्यवस्था इसे संपन्न करने में समर्थ नहीं है। समग्र व निरंतर मूल्यांकन व्यवस्था या परीक्षा आधारित व्यवस्था अथवा आठवीं कक्षा बिना पास-फेल के तनाव के शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्थाओं, गहन शैक्षिक विश्लेषण तथा चिन्तन-मनन अति आवश्यक है। शिक्षक अच्छी व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने की मुख्य धुरी है। शिक्षक यदि कर्तव्य परायण, शिक्षा के प्रति समर्पित तथा बच्चों के प्रति स्नेहिल हों, तो अनेक अभावों व कमियों के बावजूद गुणवत्तापूर्ण व अच्छी शिक्षा दी जा सकती है। शिक्षकों के शिक्षा के प्रति संपूर्ण समर्पण से ही सभी बाधाओं और कमियों के बावजूद अच्छी गुणवत्ता पूर्ण व मूल्य-संस्कार आधारित शिक्षा दी जा सकेगी। ❑

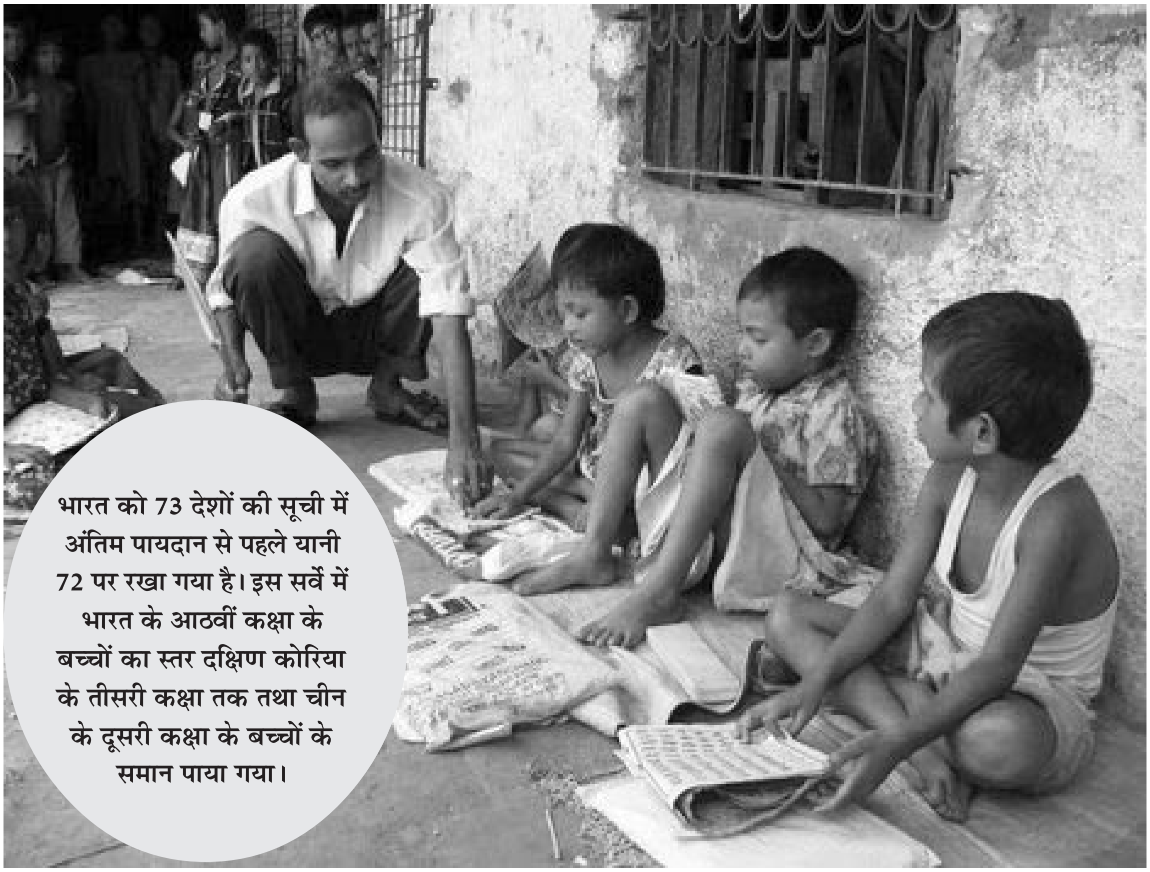

शिक्षा की दरकती बुनियाद

❑ डॉ. विशेष गुप्ता

शिक्षा की दरकती बुनियाद विगत तीन माह में देश में स्कूली शिक्षा से जुड़ी तीन रिपोर्ट प्रस्तुत हुई हैं। उन सभी में भारतीय स्कूली शिक्षा पद्धति पर प्रश्नचिन्ह लगाए गए हैं। इनमें पहली रिपोर्ट कारपोरेट जगत यानि विप्रो और एजुकेशन इनीशिएटिव से जुड़ी है, जिसमें उन्होंने पाया कि देश के प्रसिद्ध स्कूलों तक का शिक्षा का स्तर अच्छा नहीं है, क्योंकि वे रटने-रटाने पर अधिक जोर देते हैं। दूसरी रिपोर्ट आर्थिक सहयोग और विकास संगठन की ओर से एक जांच परीक्षा के तहत प्रस्तुत की गई है। इसमें भारत को 73 देशों की सूची में अंतिम पायदान से पहले यानी 72 पर रखा गया है। इस सर्वे में भारत के आठवीं कक्षा के बच्चों का स्तर दक्षिण कोरिया के तीसरी कक्षा तक तथा चीन के दूसरी कक्षा के बच्चों के समान पाया गया। तीसरी सबसे ताजा रिपोर्ट एक गैर सरकारी संस्था प्रथम द्वारा एनुअल स्टेट्स आफ एजुकेशन रिपोर्ट (असर)-2011 के रूप में तैयार की गई है। इसे हाल ही में केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री कपिल सिब्बल ने जारी किया है। यह ग्रामीण भारत से जुड़े स्कूलों व उनमें अध्ययनरत बच्चों से जुड़ा देश का यह सबसे बड़ा वार्षिक सर्वेक्षण है।

असर-2011 का निष्कर्ष यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूली बच्चों के नामांकन में पिछले एक साल में उल्लेखनीय वृद्धि के फलस्वरूप शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट दर्ज की गई है। हिंदी क्षेत्रों से जुड़े स्कूलों की स्थिति तो और भी चिंताजनक है। इस रिपोर्ट में साफ संकेत हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में 6 से 14 वर्ष की उम्र के 96 फीसदी से भी अधिक बच्चे स्कूलों में नामांकन कराने लगे हैं, परंतु सरकारी स्कूलों की तुलना में प्राइवेट स्कूलों में बच्चों का नामांकन लगातार बढ़ रहा है। रिपोर्ट के निष्कर्ष से यह तथ्य भी संज्ञान में आया है कि ग्रामीण क्षेत्र में यदि प्राइवेट स्कूल उपलब्ध हैं तो माता-पिता वहीं बच्चों को प्रवेश दिलाना ज्यादा पसंद करते हैं। हालांकि गुजरात, पंजाब तथा दक्षिण के राज्यों में तुलनात्मक स्थिति में सुधार हुआ है। जहां तक बच्चों के गणित की समझ का प्रश्न है, इसमें सभी बच्चों का प्रदर्शन कमजोर हुआ है। यदि दक्षिण के कुछ राज्यों को छोड़ दें तो देश के अन्य राज्यों में सरकारी स्कूली शिक्षा की दशा निराशाजनक ही रही है। स्कूली

शिक्षा की तीसरी सबसे बड़ी समस्या बच्चों की उपस्थिति को लेकर उजागर हुई है। बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे बड़े राज्यों में स्कूलों में बच्चों की उपस्थिति में 2007 की तुलना में 2011 में 7 से लेकर 9 फीसदी तक की कमी आई है। ट्यूशन पढ़ने के मामले में भी सरकारी स्कूलों की स्थिति बहुत खराब है। यह सर्वेक्षण आगे स्पष्ट करता है कि सरकारी स्कूलों में शिक्षक-छात्र अनुपात में वृद्धि लगभग नगण्य रही है तथा ढांचागत सुविधाओं में भी कोई खास वृद्धि नहीं हो पाई है। स्कूलों में भवन की स्थिति आज भी ऐसी है कि जहां कई-कई कक्षाएं एक साथ लगानी पड़ रही हैं। हालांकि केंद्र सरकार ने देश में स्कूली शिक्षा की बदतर स्थिति के लिए राज्य सरकारों को दोषी ठहराया है।

यह किसी हद तक इसलिए ठीक है, क्योंकि शिक्षा के ढांचे को सुधारने की जिम्मेदारी राज्यों की ही है, परंतु देखने में आया है कि शिक्षा का अधिकार कानून बनने के डेढ़ साल बाद भी राज्य सरकारें गंभीर नहीं हैं। देश में लाखों शिक्षकों के पद आज भी रिक्त पड़े हैं। ऐसी परिस्थितियों में देश में प्राथमिक शिक्षा की ढांचागत गुणवत्ता का अनुमान स्वत: ही लगाया जा सकता है। देश में प्राथमिक शिक्षा की बढ़ती मांग के अनुरूप अनुमानित बजट का जो प्रावधान किया जाता रहा है वह निश्चित ही इतना कम है कि राज्य सरकारें सदैव ही बजट की कमी का रोना रोते हुए अल्पवेतन अथवा ठेके पर शिक्षा कर्मियों की भर्ती करते हुए प्राथमिक शिक्षण की खानापूर्ति करती रही हैं। देश की आजादी के बाद हमारा यह स्वप्न था कि यहां बुनियादी शिक्षा अपने राष्ट्र की जड़ों से जुड़ते हुए अपने स्वदेशी मूल्यों, संस्कारों व परंपराओं का पोषण करेगी, परंतु यहां राष्ट्रीय विकास के लिए जिस विदेशी मॉडल का अनुकरण किया गया उससे हमारी मातृभाषा से जुड़ी प्राथमिक शिक्षा पृष्ठभूमि में चली गई और मैकाले शिक्षा पद्धति से जुड़ी अंग्रेजी शिक्षा आत्मसम्मान का साधन बन गई। यह आश्चर्य की बात है कि देश में सरकारी प्राथमिक शिक्षा की इतनी बदतर स्थिति होने के बावजूद भी देश की संसद को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा कानून बनाने में छह दशक से भी अधिक लग गए। देश में बुनियादी शिक्षा के ढांचे के लगातार कमजोर होने का दुष्परिणाम यह हो रहा है कि उससे हमारी माध्यमिक व उच्च शिक्षा भी अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रही है।

सही बात यह है कि प्राथमिक शिक्षा देश की रीढ़ है, माध्यमिक शिक्षा उस विकास की रीढ़ को स्तंभित करने का माध्यम है और उच्च शिक्षा राष्ट्र के विकास को उत्कृष्टता की ओर ले जाने वाली संस्था है। उच्च शिक्षा के स्तर पर भी भारत की स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं है। देश के सरकारी स्कूलों से पब्लिक स्कूलों में बच्चों का लगातार पलायन तथा बढ़ती ट्यूशन की प्रवृत्ति देश की बुनियादी शिक्षा की दरकती दीवारों का संकेत है। इस सच से इंकार नहीं किया जा सकता कि मध्यान्ह भोजन, यूनीफार्म, साइकिल और पाठ्य पुस्तकों के लालच से सरकारी स्कूलों में प्रवेश बढ़े हैं, परंतु क्या प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य मात्र स्कूलों में प्रवेश में वृद्धि तक ही सीमित रहना चाहिए। देश की प्राथमिक शिक्षा के बुनियादी तंत्र को विकसित करने की जरूरत है। इसके अलावा पाठ्यक्रम को रोचक तथा उसे बच्चे के व्यक्तित्व के अनुकूल बनाने के साथ बड़े परिवर्तन लाने की भी आवश्यकता है। ❑

(लेखक समाजशास्त्र के प्राध्यापक हैं)

अंधेरे स्कूल की बेजोड़ उपलब्धि

कहते हैं कि प्रतिभा किसी की मोहताज नहीं होती है। इसे चरितार्थ किया है कि बिहार के दूरस्थ स्थित एक गांव के छह छात्रों ने। इन छात्रों ने इंटरनेशनल मैथमैटिक्स (आईएमओ) ओलिम्पियाड में जगह बनाई है। ऐसे में जहां सभी सुविधाओं से सम्पन्न शहरी छात्र गणित व विज्ञान में कई देशों से पीछे हैं, वहां इन बच्चों की उपलब्धि चौंकाने वाली है।

यह स्कूल गोपालगंज जिले के चम्पनपुरा गांव में है जहां बिजली तक नहीं है। आईआईटी के एक पूर्व छात्र द्वारा स्थापित इस स्कूल के एक छात्र ने गणित ओलिम्पियाड में 446 वीं रैंक हासिल की है। अब ये छात्र आईएमओ के दूसरे चरण की तैयारी में जुटे हैं। सभी छात्र कक्षा चार से आठवीं के बीच अध्ययनरत हैं। स्कूल की संस्थापक संस्था पर्पल लीप के चन्द्रकांत सिंह ने बताया कि इन छात्रों की सफलता इस मायने में भी महत्वपूर्ण है कि आईएमओ जैसे प्रतिष्ठित ओलिम्पियाड में गांव के बच्चों ने बाजी मारी है।सबसे बड़ी बात तो यह है कि कक्षा तीन में पढ़ने वाले सुनील कुमार के पिता योगेन्द्र कुमार तो औरंगाबाद में मामूली काम करते हैं। इन छात्रों में से सनी का खर्च बिहार फाउंडेशन उठा रहा है। सनी इससे पहले भी साइंस ओलम्पियाड के लिए चुना जा चुका है।

मजदूरों के घरों के चिराग

स्वेतांक (कक्षा चार), अतुल कुमार (कक्षा पांच), आफताब आलम (कक्षा छह), उत्सव श्रीवास्तव (कक्षा सात), राज आर्यन (कक्षा आठ) और सुनील कुमार (कक्षा तीन) के पिता एक मामूली हैसियत वाले मजदूर हैं।सुनील के पिता तो औरंगाबाद में दैनिक वेतन पाने वाले मजदूर हैं। इन छात्रों को बेंगलूरू, सिंगरौली और कोरबा के अध्यापक वीडियो कांफ्रेंस के माध्यम से पढ़ाते हैं। चन्द्रकांत सिंह बच्चों को बेंगलूरू से गणित पढ़ाते हैं तो मध्यप्रदेश के सिंगरोली में एनटीपीसी में काम कर रहे पंकज सिंह भौतिकी की शिक्षा दे रहे हैं।

आरटीई को लागू करने की चुनौती

❑ विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

कोठारी आयोग ने पड़ौसी विद्यालय की अवधारणा देकर देश में समान शिक्षा व्यवस्था का मार्ग सुझाया था मगर सरकारों की कमजोर इच्छा शक्ति के चलते उस लक्ष्य की ओर बढ़ने का कोई प्रयास अब तक नहीं किया गया है। आजादी की उम्र बढ़ने साथ साथ भारत की शिक्षा व्यवस्था में विषमता की पर्तें बढ़ती ही चली गई है। शिक्षा का अधिकार कानून में पड़ौसी विद्यालय नाम का उल्लेख तो किया गया मगर उसमें शिक्षा व्यवस्था की विषमता को कम करने का कोई संकल्प नहीं है। समय के साथ उसकी कमियाँ सामने आने लगी है।

इसी सत्र में दिल्ली के एक विद्यार्थी कृष्णकुमार झा ने उत्तरी दिल्ली के अपने आवास के पड़ौस में स्थित जवाहर नवोदय विद्यालय में कक्षा छः में प्रवेश हेतु आवेदन किया था। विद्यालय अधिकारियों ने नियमों का हवाला देते हुए कृष्णकुमार को प्रवेश देने से इंकार कर दिया था। कृष्णकुमार झा के अभिभावकों ने शिक्षा के अधिकार की दुहाई देकर दिल्ली के तीस हजारी जिला न्यायालय में वाद प्रस्तुत कर प्रवेश दिलाने की गुहार की। न्यायालय ने शिक्षा के मौलिक अधिकार का हनन मान कर कृष्णकुमार झा का प्रार्थना पत्र स्वीकार कर लिया तथा 3 दिसम्बर 2011 को उसके पक्ष में फैसला दिया है।

कृष्णकुमार झा ने नवोदय विद्यालय में प्रवेश हेतु ली जाने वाली परीक्षा दी थी। इससे प्रवेश का मार्ग नहीं मिला तो उन्हें नए बने शिक्षा के अधिकार कानून का ध्यान आया जिसमें प्रवेश हेतु बच्चे की किसी अतिरिक्त योग्यता के प्रवेश नहीं लेने की बात की गई हैं। इस वाद में केन्द्र सरकार व नवोदय विद्यालय समिति को पार्टी बनाया गया था। कृष्णकुमार झा के पिता तथा उनके वकील ने न्यायालय को बताया कि कृष्णकुमार झा को सरकार द्वारा चलाए जा रहे किसी भी विद्यालय में प्रवेश लेकर अध्ययन करने का मौलिक अधिकार है और उसने जवाहर नवोदय विद्यालय में प्रवेश लेने का तय किया है। अतः विद्यालय प्रशासन को आदेश दिया जावे कि कृष्णकुमार झा को तुरन्त विद्यालय में प्रवेश दे कर उसे आगे पढ़ने का अवसर प्रदान करे। सम्भवतः शिक्षा के अधिकार को लेकर न्यायालय जाने तथा अपने हक में फैसला पाने वाला कृष्णकुमार प्रथम विद्यार्थी है। हम जानते है कि भारत में न्याय इतना सस्ता नहीं है। कृष्णकुमार ने इस फैसले के रूप में न्याय के महल की सीढ़ी पर प्रथम कदम रखने में ही सफलता प्राप्त की है। प्रशासन ने नियमों का हवाला देकर आगे अपील करने का मन बनाया है। अधिकारियों का कहना है कि बिना किसी भेदभाव के प्रवेश दिया जाता है मगर इसके लिए प्रवेश परीक्षा

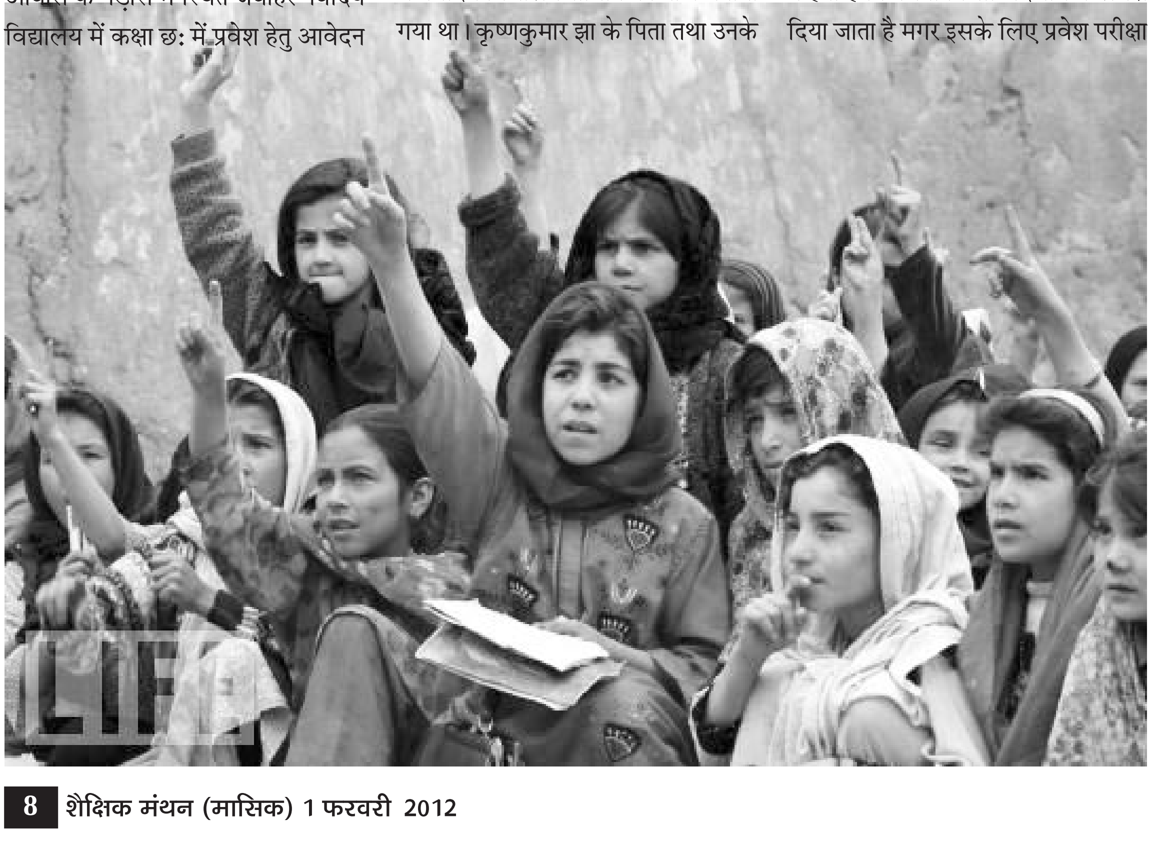

की वैतरणी पार कर मेरिट में आना जरूरी है। रोचक तथ्य है कि जिस सरकार ने कृष्णकुमार को शिक्षा का मौलिक अधिकार दिया वही उसके विरोध में न्यायालय में खड़ी नजर आएगी। अधिक सम्भावना यही है कि ऊपर के न्यायालय में कृष्णकुमार लड़ाई हार जाएगा क्योंकि शिक्षा का अधिकार अधिनियम कृष्णकुमार जैसे बच्चों को पड़ौसी नवोदय विद्यालय में प्रवेश की अनुमति नहीं देता। सरकार ने केन्द्रीय, नवोदय व सैनिक विद्यालयों को विशिष्ट विद्यालय घोषित कर उन्हें, अन्य सरकारी विद्यालयों के विपरीत, किसी भी बच्चे को भर्ती करने की बाध्यता से मुक्त कर रखा है।

शिक्षा के अधिकार से शिक्षा के प्रति रूझान बढ़ने के साथ ही 'गुणवत्ता' पूर्ण शिक्षा की भूख बढ़ती जा रही है और अभिभावक अपनी पसन्द के गिने चुने 'अच्छे' विद्यालयों में ही अपने बच्चों को प्रवेश दिलाना चाहते हैं। शिक्षा व्यवस्था की विषमता के कारण शिक्षा के अधिकार को ठीक से लागू कराने में आने वाली परेशानी को पश्चिम बंगाल के मालदा जिले में घटी घटना के उदाहरण से समझा जा सकता है। मालदा में सरकारी सहायता प्राप्त बारलो बालिका हाई स्कूल में प्रवेश को लेकर अभिभावकों के दो समूहों ने एक दूसरे के विपरीत माँग करते हुए राजमार्ग रोककर प्रशासन के विरोध में प्रदर्शन किया। प्राथमिक विद्यालय की पढ़ाई पूर्ण कर आगे अध्ययन हेतु उक्त माध्यमिक विद्यालय में उपलब्ध स्थान से बहुत अधिक बालिकाओं के आवेदन प्राप्त हुए थे। विद्यालय प्रशासन द्वारा लाटरी निकाल कर वांछित संख्या में बालिकाओं को प्रवेश दिया जाना था। 2012 से बंगाल में शिक्षा का अधिकार लागू हो जाने के कारण प्रशासन की यह बाध्यता हो गई कि वह विद्यालय परिसर में चल रहे प्राथमिक विद्यालय की सभी छात्राओं को प्रवेश देने के बाद शेष रहे स्थानों पर ही

कोठारी आयोग ने पड़ौसी विद्यालय के रूप में कोई असम्भव अवधारणा प्रस्तुत नहीं की थी। विकसित मुल्कों में आज भी सही अर्थों में पड़ौसी विद्यालय सफलता पूर्वक चल रहे हैं। वहाँ हर विद्यालय का एक पूर्व निर्धारित पड़ौस होता है। उस निर्धारित पड़ौस के अन्तर्गत रहने वाले प्रत्येक परिवार, चाहे अमीर हो या गरीब, के बच्चे को उसी विद्यालय में पढ़ने की अनिवार्यता होती है। शिक्षा का अधिकार संविधान की भावना के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था की बात तो करता है मगर शिक्षा व्यवस्था में विषमता का पक्ष लेकर समता के अधिकार का हनन कर संविधान की अवहेलना भी करता है।

केवल उन बालिकाओं के आवेदन को ही वैध मानते हुए लाटरी निकाले जो विद्यालय परिसर के एक किलोमीटर के क्षेत्र में रहती है। ऐसे में 450 बालिकाओं, जो एक किलामीटर के क्षेत्र की परिभाषा में नहीं आ रही थी, के आवेदन लाटरी में सम्मिलित नहीं किए जा सकते थे। लाटरी देखने के लिए एकत्रित हुए अभिभावक अपने अपने लाभ को ध्यान में रख कर दो भागों में बंट कर आन्दोलन करने लगे थे। एक पक्ष एक किलामीटर दूरी को प्राथमिकता देने की मांग कर रहा था तो दूसरा अपने बच्ची के अच्छे अंकों को दिखा कर प्रवेश देने की माँग कर रहा था। अधिकारियों का कहना है कि मालदा में 29 हाई स्कूल हैं और सभी बच्चियों को अगली कक्षा में प्रवेश देने की कोई परेशानी नहीं है। परेशानी तो अधिकांश अभिभावकों द्वारा 5-6 विद्यालयों में ही प्रवेश देने की मांग करने के कारण हुई है।

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि प्रत्येक अभिभावक अपने बच्चे को 'गुणवत्ता' पूर्ण शिक्षा दिलाना चाहता है जबकि विषमता का पोषक शिक्षा का अधिकार इसकी अनुमती नहीं देता। कानून उसे विद्यालय उपलब्ध कराता है मगर उसकी इच्छा की पूर्ति नहीं करता। सही है कि सबकी इच्छा की पूर्ती नहीं की जा सकती मगर उन बच्चों की मांग को किसी भी दृष्टि से अनुचित भी नहीं ठहराया जा सकता। इसका एक ही उपाय है कि इस इच्छा को ही समाप्त कर दिया जाय। इसी बात का प्रयास कोठारी आयोग ने पड़ौसी विद्यालयों के रूप में संकल्पित किया था।

केन्द्र सरकार प्रत्येक ब्लाक पर मॉडल स्कूल खोल रही है। स्पष्ट हैं कि ऐसे विद्यालय कुछ 'खास' होंगे अर्थात विषमता के पोषक होंगे। पड़ौसी विद्यालयों द्वारा शिक्षा में समानता के पक्षधर कई मुख्यमंत्री मॉडल स्कूल खोलने के स्थान पर उसी धन राशि को राज्य सरकारों को उपलब्ध कराने की मांग कर चुके हैं ताकि वे सभी विद्यालयों को समान स्तर से ऊँचा उठा सके।

कोठारी आयोग ने पड़ौसी विद्यालय के रूप में कोई असम्भव अवधारणा प्रस्तुत नहीं की थी। विकसित मुल्कों में आज भी सही अर्थों में पड़ौसी विद्यालय सफलता पूर्वक चल रहे हैं। वहाँ हर विद्यालय का एक पूर्व निर्धारित पड़ौस होता है। उस निर्धारित पड़ौस के अन्तर्गत रहने वाले प्रत्येक परिवार, चाहे अमीर हो या गरीब, के बच्चे को उसी विद्यालय में पढ़ने की अनिवार्यता होती है। यदि ऐसे पड़ौसी विद्यालय अपने देश में हो तो कृष्णकुमार झा तथा मालदा में 450 बच्चियों को पढ़ने के समान अवसर के लिए निराश नहीं होना पड़ता। शिक्षा का अधिकार संविधान की भावना के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था की बात तो करता है मगर शिक्षा व्यवस्था में विषमता का पक्ष लेकर समता के अधिकार का हनन कर संविधान की अवहेलना भी करता है। ❑

(बाल व विज्ञान विषयक लेखक हैं)

ये शिक्षा के बीमारू राज्य

❑ एन. के. वशिष्ठ

कुछ माह पहले हैडमास्टरों की एक बैठक में एक सरकारी अधिकारी ने कहा, सभी बच्चों का दाखिला लें, उनके साथ मारपीट न करें, उन्हें पास करके अगली कक्षा में भेजें और सुनिश्चित करें कि वे अगले साल भी दाखिला लें और अगर आप ऐसा कर लेते हैं तो आप यह तय मानिए कि आपने शिक्षा के अधिकार के तहत मिले अपने टारगेट को प्राप्त कर लिया है।' अधिकारी के इस आदेश के पीछे छिपा संदेश स्पष्ट था। संकेत यह था कि बच्चा पढ़ने आए न आए, रजिस्टर में नाम होना चाहिए पढ़ाने की कोई जरूरत नहीं है; और अगले साल भी यही काम करना है ताकि जैसे-तैसे 'लक्ष्य' हासिल हो सके।

एनुअल स्ट्रेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट (असर)2011 की ताजा रिपोर्ट में यह किस्सा बयां किया गया है। व्यापक रूप से किए गए इस सर्वेक्षण में सरकार के तमाम दावों के खोखलेपन को उजागर किया गया है। अध्ययन में इस बात को भी दर्शाया गया है कि किस तरह से बीमारू राज्य (बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और साथ ही साथ उत्तराखंड व छत्तीसगढ़) शिक्षा के क्षेत्र में लगातार पिछड़ रहे हैं। भारत सरकार ने प्राथमिक शिक्षा का बजट 2007-08 में 68,710 करोड़ रुपए से बढ़ाकर 2009-10 में 97,255 करोड़ रुपए कर दिया लेकिन ऐसा लग रहा है कि इन सारे प्रयासों पर संबंधित राज्य सरकारों के भ्रष्ट तंत्र ने पानी फेर दिया है। दरअसल शिक्षा देने की जिम्मेदारी संवैधानिक रूप से ही नहीं, व्यावहारिक रूप से भी राज्य सरकारों की ही है।

असर की रिपोर्ट देखने के बाद यहां प्रश्न यह उठता है कि क्या इसी किस्म के प्रयासों से हम चीन जैसे राष्ट्रों से मुकाबला कर सकेंगे। आज भारत में जहां उच्च शिक्षा के लिए केवल 13.5 प्रतिशत छात्र दाखिला (जीईआर) ले रहे हैं वहीं चीन व मलेशिया, जो हमसे काफी पीछे रहा करते थे, के 22.1 व 24 प्रतिशत छात्र आज उच्च शिक्षा में दाखिला लेते हैं। अमेरिका में उच्च-शिक्षा में 81.6 प्रतिशत छात्र प्रवेश लेते हैं। एक और उदाहरण देखिए। आज से 18 साल पहले जहां चीन में केवल 1900 पीएचडी हुआ करते थे (जबकि भारत में करीब 3000 पीएचडी होते थे) आज 22 हजार पीएचडी हर साल निकलते हैं। भारत में केवल छह हजार पीएचडी निकल रहे हैं जबकि अमेरिका में 40 हजार। अगर यही स्थिति रही तब भारत 'पॉवर इज नॉलेज' (ज्ञान ही शक्ति है) में कितना पीछे रहेगा, अंदाजा लगाया जा सकता है।

केवल 13.5 प्रतिशत छात्र दाखिला (जीईआर) ले रहे हैं वहीं चीन व मलेशिया, जो हमसे काफी पीछे रहा करते थे, के 22.1 व 24 प्रतिशत छात्र आज उच्च शिक्षा में दाखिला लेते हैं। अमेरिका में उच्च-शिक्षा में 81.6 प्रतिशत छात्र प्रवेश लेते हैं। एक और उदाहरण देखिए। आज से 18 साल पहले जहां चीन में केवल 1900 पीएचडी हुआ करते थे (जबकि भारत में करीब 3000 पीएचडी होते थे) आज 22 हजार पीएचडी हर साल निकलते हैं। भारत में केवल छह हजार पीएचडी निकल रहे हैं जबकि अमेरिका में 40 हजार।

असर की रिपोर्ट के अनुसार उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश में कक्षा पांच में आधे से ज्यादा छात्रों को कक्षा दो का ज्ञान नहीं रहता, वह गणित से घबराया हुआ है। दाखिले के जो आंकड़े राज्य सरकारों के हैं खासकर उत्तर प्रदेश और बिहार के वे असर के आंकड़ों के मुताबिक फर्जी हैं। उत्तर प्रदेश के जिला आजमगढ़ में जब एक युवा ग्राम प्रधान ने वजीफा देने के लिए कक्षा पांच के छात्रों को बुलाया और अध्यापकों से कहा कि जो-जो बच्चे छात्रवृत्ति ले रहे हैं उनसे रजिस्टर में हस्ताक्षर करवाएं तो बमुश्किल चार बच्चों ने हस्ताक्षर किया जबकि अन्य 70 बच्चों ने अंगूठा लगाया। अचंभित प्रधान ने अध्यापकों से जब अंगूठा लगाने का कारण पूछा तब अध्यापकों ने बताया कि ये छात्र लिख नहीं सकते। गहराई में जाने पर पता चला कि राज्य के अफसरों और मंत्री की हिदायत है कि अगर उपस्थिति पूरी नहीं हुई या छात्र कक्षा में फेल हुए तो अध्यापक का तबादला कर दिया जाएगा। लिहाजा उत्तर प्रदेश के अधिकांश भाग में शिक्षक, छात्र आए न आए उपस्थिति दर्ज करते हैं, छात्र को पढ़ाने की कोई जरूरत नहीं होती और अगले क्लास में पहुंच जाता है। चूंकि शिक्षा के क्षेत्र में राज्य सरकार की भूमिका बहुत बड़ी है और अभी तक शिक्षा को लेकर जनमत इतना प्रबल नहीं हुआ है

कि सरकारें उससे प्रभावित हों लिहाजा लगातार शिक्षा को लेकर सरकारी उदासीनता बनी हुई है। यहां तक कि उत्तर प्रदेश और बिहार ऐसे राज्य हैं जहां अभावग्रस्त लोगों के मतों से सरकारें बनती हैं, उनके यहां भी यह उदासीनता विकराल रूप से है। असर के सर्वेक्षण में पाया गया कि जहां दक्षिण के तमाम राज्य और उत्तर में बिहार और छत्तीसगढ़ ने कुछ क्षेत्रों में अच्छी प्रगति दिखाई है वहीं उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश बुरी तरह पिछड़े हैं। 11 से लेकर 14 वर्ष की आयु के बच्चों का स्कूल में दाखिला प्रतिशत उत्तर प्रदेश में सबसे खराब रहा है। उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में अभिभावकों का भरोसा सरकारी स्कूलों से उठ चुका है। वे गरीबी के बावजूद महंगे प्राइवेट स्कूलों की ओर भाग रहे हैं।

बीमारू राज्यों में राजस्थान और नए राज्य छत्तीसगढ़ को छोड़कर बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश सबसे नीचे हैं। मानव विकास सूचकांक 2011 की ताजा रिपोर्ट के अनुसार बिहार, मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश सबसे नीचे 35, 33 व 32वें स्थान पर हैं। 34वें स्थान पर ओडिशा है। दरअसल छत्तीसगढ़ और झारखंड 30 वें और 31वें स्थान पर हैं क्योंकि यहां प्राकृतिक संसाधन जमकर बेचे जा रहे हैं जिससे प्रति व्यक्ति आय सरकारी दस्तावेजों में बढ़ गई है। हालांकि इन सभी पांच राज्यों में स्वास्थ्य और शिक्षा बेहद खराब है। उत्तर प्रदेश की सरकार जो अपने को गरीबों की मसीहा मानती है उसके पांच वर्ष के राज में मानव विकास लगभग हर मानदंड पर राष्ट्रीय औसत से नीचे रहा है चाहे वह प्रति व्यक्ति आय हो, साक्षरता हो या स्वास्थ्य। लगता है कि इन राज्यों में केंद्र के फंड का इस्तेमाल सरकारी अमला जेब भरने में कर रहा है। हाल ही में सीएजी की एक रिपोर्ट में पता चला है कि बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में मरे हुए लोगों को रोजगार दिया गया है। विश्व भूख सूचकांक की एक अन्य ताजा रिपोर्ट के अनुसार मध्य प्रदेश बेहद गरीब अफ्रीकी देशों से भी बदतर स्थिति में है। अभी हाल ही में बिहार में लड़कियों को साइकिल देने की योजना का राज खुला और पाया गया कि कटिहार, शिवहर, रोहतास सरीखे जिलों में एक-एक लड़की के नाम पर दो से तीन साइकिलों की धनराशि निकाली जा चुकी है और जांच में उनके पिता और घर का पता नहीं मिल रहा है। मिड-डे मील योजना की जांच करने पर पता चला कि माननीय गुरु जी लोगों ने उपस्थिति रजिस्टर में छात्रों की उपस्थिति शत-प्रतिशत दिखाई है जबकि बच्चों की वास्तविक उपस्थिति एक-चौथाई ही है वहीं मिड-डे मील का तीन-चौथाई खुद खा गए हैं।

केंद्र सरकार द्वारा वित्तपोषित सर्वशिक्षा अभियान के तहत बिहार के 380 प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयों का तीसरी पार्टियों से निरीक्षण कराया गया जिसमें 350 में गड़बड़ियां पाई गईं। असर व अन्य संस्थाओं की जांच में उत्तर प्रदेश में भी कमोबेश ऐसी ही स्थिति पाई गई। बिहार में नीतीश कुमार को जबर्दस्त वोट इन्हीं योजनाओं से मिले थे। 'बीमारू' राज्यों खास करके उत्तर प्रदेश, बिहार व मध्य प्रदेश में अगर कोई क्रांतिकारी कदम नहीं उठाया गया तो अगले दस साल बाद जो नई पीढ़ी आएगी व न तो रोजगार की होड़ में आगे होगी न स्वास्थ्य के स्तर पर बेहतर होगी। इन राज्यों में भ्रष्टाचार भी अपने चरम पर है। दुष्यन्त कुमार का शेर याद आता है? सिर से सीने में कहीं, पेट से पांवों में कभी, एक जगह हो तो कहें, दर्द इधर होता है। ❑

(लेखक वरिष्ठ टीवी पत्रकार हैं)

More than 50 applicants for each general nursery seat

The Indian Institute of Management receives applications from approximately 61 candidates per seat annually and the Indian Institute of Technology has 57 applying for each seat. The applications at these premier institutes, however, come in from across the country. But for nursery admission in city schools, close to 53 candidates apply for each seat from Delhi alone. On the last day of sale of forms, Springdales-Pusa Road said it gave out approximately 5,500 forms in the general category. The school has 102 general seats, taking the ratio to 53:1. The school also has 25 applicants for each EWS seat. Like every day since the beginning of sale of forms this year also parents lined up to buy and submit forms from early morning.

"May be we will take the admission procedure online from next year, because we face crowd management problems this year," said principal Ameeta Wattal. She said the school is situated on a busy crossing and the crowd "can lead to law and order problems also".

Bluebells International School had 48 applicants per seat, after the close of the sale of forms, with 82 general seats. Principal Suman Kumar said the school took the admissions online as it is "smoother". Around 15 students in the EWS category will be contesting for each seat. As schools in Delhi closed sale of admission forms after 16 days, many principals believe that keeping the admission process online helps both parents and schools. Rekha Bakshi from Vasant Valley School said online admissions were "much easier". The school gives out forms for free and has had online admissions since the point system was introduced. "I don't have any long queues outside my school — they are inconvenient both for us and the parents," Bakshi said. The school received 3,300 applications for 68 general category seats and about 300 for 22 EWS seats. At Tagore International School-East of Kailash, there are 46 applicants for every seat.

Aser Report : Beyond The Truth

CHILDREN IN SCHOOLS (2011)

Age group	Govt.	Pvt.	Other	Not in School	Total
6-14 ALL	60.2	35.1	0.2	4.5	100
7-16 ALL	59.7	33.4	0.2	6.7	100
7-10 ALL	59.8	36.9	0.3	3.0	100
7-10 BOYS	56.7	41.0	0.3	2.0	100
7-10 GIRLS	63.9	31.5	0.3	4.3	100
11-14 ALL	61.6	32.0	0.1	6.3	100
11-14 BOYS	59.6	36.2	0.1	4.2	100
11-14 GIRLS	64.3	26.7	0.1	8.9	100
15-16 ALL	55.4	27.6	0.1	16.8	100
15-16 BOYS	56.4	30.3	0.1	13.2	100
15-16 GIRLS	54.1	23.5	0.1	22.3	100

Source: ASER; Pic: Bhagirath

There has been a sharp decline in the dropout of girl students in the state. The decline is more in higher classes than in middle school. But the warning is that unless the initiatives are kept alive, it will be difficult to keep the same rate of decline in the next 10 years.

According to the Annual Status of Education Report (ASER) for rural areas 2011, prepared by Pratham, the dropout of girl students in the age group of 11 to 14 years is currently 9.5% in the state. This was 20% in 2006. For girls in the age group of 7 to 10 years, the dropout has fallen from 11 % in 2006 to about 4.5 % in 2011.

However, previous dropout trends show that after a periodic pattern of a sharp decline every 10 years, it plateau out itself in the next 10 years. A similar decline in the dropout level was seen in 2006 to 2007, while the period between 2007 to 2008, rate of drop remained constant. The cycle repeated itself in the next four years. In 2010, the dropout stood at 12.5 %, same as in 2009.

The dropout for girls between the age of 7 and 10 years has also declined from 11% in 2006 to 9% in 2011 to catch up with the trend of dropouts amongst higher aged (11 to 14 years) boys. Rajasthan has been fighting to curb dropout in schools, especially among the girl child and schemes such as post-metric scholarships and doling out of bicycles are just some of them.

While it may be so, the quality of education in the state, according to the survey based on analysis of data collected from households in 31 of the 32 districts, still remains under a cloud. The survey says that only 6% of those studying in Class II can read their textbooks. Worse, only 8.7 % of those in Class II can read Class 1 level text. And though these percentages increase according to the class, there are still some students (0.8 %) studying in Class XIII who cannot read anything, 1.9 % of them can read only alphabets, 3.1 % can read words and most (82.3 %) of them are just suitable for Class II level texts.

In fact, over the years, the quality of education in the state has been on a decline with the trends over time graph of children studying in Class III who cannot read Class 1 level text on the rise. From figures of 70% of students studying in Class III in government schools not being able to read Class 1 level text, it has gone upto 79 % in 2011. Last year it was about 75 %.

The situation in private schools is better, though not improving, with corresponding figures in 2008 being at 40% in 2008 and now going upto 51%. Last year, the figure for this was 50%.

Nearly 67% of students studying in Class V in various government schools in the state still cannot read Class II level text while those in private school ranges around 40%. Even in this segment, the trend has only been rising for both government and private schools.

In fact, arithmetic continues to plague students in rural areas with a mere 67.7 % of those in Class XIII knowing division, 25.2 % knowing subtraction, 8.7 % recognize numbers between 11 to 99, 2.7 % recognize numbers between 1 to 9 and 0.8 % of students are such that even in the eighth grade they cannot recognize any number. The trends graphs for such students reveal that problems with arithmetic remains and has not shown much improvement in the past three years.

Paid tuitions, according to the survey, is more a practice in private schools than in government ones in rural areas though over the years the trend of taking tuitions has declined. As against 1.9% students studying in government schools, who take tuitions, it is 8.5 % of those in private schools pay for getting taught outside schools. ❑

Reading, maths ability declining in kids: Survey

❑ **Akshaya Mukul**

Pratham's seventh Annual Survey of Education Report (ASER) of rural India released tells a familiar tale: rising enrolment but declining attendance, overreliance on private tuitions, decline in reading and mathematical ability of children in the age group between six and 14. The report was released by HRD minister Kapil Sibal.

Use of computers is also on the rise in upper primary schools. Almost a third (30.8%) of upper primary schools had computers. But proportion was high in Kerala (78.4%), Tamil Nadu (51.1%), Gujarat (31%) and Maharashtra (30.6%). In contrast, only 7.9% government primary schools had computers. Kerala is the only exception, where 78.5% of primary schools were equipped with computers.

Despite the claim by Pratham that ASER is the largest educational survey in the country, the National University Educational Planning and Administration's district education report is far bigger - reaching out to each and every school with more comprehensive data. Sibal said that it would be wrong to blame the Central government alone for ills of elementary education as it is left to state governments to carry out work at the ground level. The good news about ASER 2011 is that 96.7% children in the 6-14 age bracket were enrolled in schools. Heartening news continues on the girl's enrolment front as well that increased from 89.7% (2010) to 94.8% (2011). Credit goes to states like Bihar, where 95.5% girls were enrolled, West Bengal and Chhattisgarh each logging 95.7% girls' enrolment. Till 2006, these states had around 90% enrolment for girls. Uttar Pradesh continues to perform poorly. Girl's enrolment stands at 88.9%, a decline from 90.3% in 2006.

Another positive aspect of enrolment is increase in enrolment of five-year-old children in schools. National average is 57.8% with strong variation across states. For instance, enrolment of five-year-olds was 87.1% in Nagaland, and 18.8% in Karnataka.

More and more children are going to private schools. Nationally 25.6% children are going to private schools. In 2006, only 18.7% children were enrolled in these schools. Kerala and Manipur had more than 60% children going to private schools. Between 30% and 60% of children in rural areas of Haryana, UP, Nagaland, Meghalaya, Punjab, J&K, Rajasthan, Uttarakhand, Maharashtra and Andhra Pradesh were enrolled in private schools. Children's attendance has declined from 73.4% (2007) to 70.9% (2011). Decline is slightly steeper in upper primary schools, where it decreased from 75.6% (2007) to 71.9% (2011). In Bihar, there has been a sharp decline, from 59% (2007) to 50% (2011). In Madhya Pradesh, it has fallen from 67% (2007) to 54.5% (2011); in UP from 64.4% (2007) to 57.3% (2011).

But teacher attendance is high at 87%. Gujarat topped with 95.6% attendance. ❑

Sibal for ombudsman in higher edu institutes

With a host of higher education reform bills still to get Parliament's nod, the HRD ministry has decided to implement part of its reform agenda through executive order from the next academic session.

HRD minister Kapil Sibal on Monday said a grievance redressal mechanism for students and applicants for admission in higher educational institutions is being put in place. It would be implemented in all central universities, IITs, IIMs, NITS, IIITs, private and government-run deemed universities and all higher educational institutions under various Central government ministries.

Regulatory bodies like University Grants Commission, All India Council for Technical Education and National Council for Teacher Education would ask educational institutions to set up grievance redressal mechanism. Although the order would not be binding on the institution, the regulator would rely on the frequency of nonobservance to decide on continued recognition to these institutions. As part of the initiative, every institution would be required to appoint an ombudsman who would be a person with judicial or legal experience.

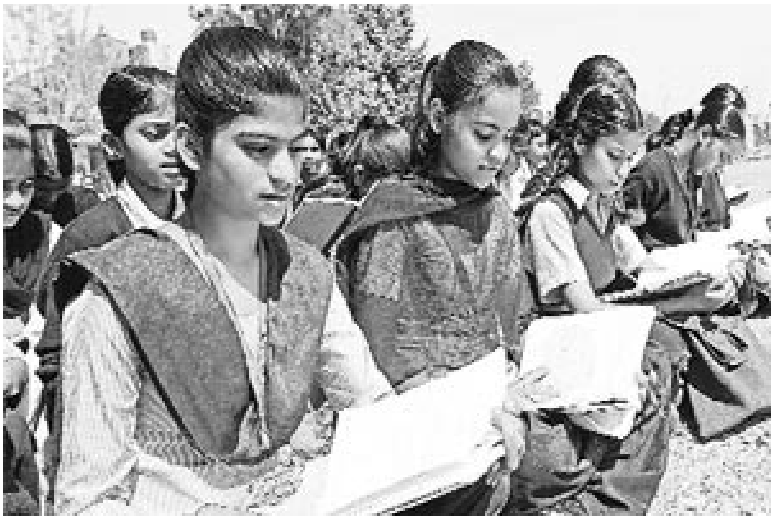

Drop in learning level in India since 2006: A Study

❑ **Megha Sharma**

Ahmedabad-based Educational Initiatives (EI) carried out a research recently and brought out a study titled Quality Education Study (QES). The study sought to assess the current scenario of education in five metros across India with an aim to promote learning among schoolchildren with understanding.

Quality education is often associated with first -quality learning environments and second- holistic development of students (UNESCO, 2002).

The study, which has been conceptualised and managed jointly by Wipro and EI, brings out some very interesting trends seen among school-going children. A significant finding was that there has been a drop in learning level from a previous study done in 2006. Students are exhibiting rote learning and performing comparatively better in questions that are procedural or do not involve deeper understanding or application of concepts.

Their attitude towards gender equality, diversity, sensitivity towards others, civic, citizenship issues, ecological issues, and interpersonal skills was also assessed.

A startling finding was that 43% of students in class IV, VI and VIII felt that education for a girl is not as important as responsibility towards the family. The study's results hint at the deep-rooted bias in Indian society against the girl child. Even students hailing from highly educated elite families had such a bias.

They were asked about differently-abled people (including students). A majority (70-80%) of them were found to have the notion that differently-abled people are burdensome, unhappy and not able to do well in studies.

Schoolchildren belonging to the 'top' Indian schools performed poorer than the international average in questions on maths, science and reading literacy. Boys were seen to perform better than girls in maths and science at class VIII level.

A considerable difference was observed in the education level of students studying in schools affiliated to different boards and cities. Schools from Council for the Indian School Certificate Examinations (CISCE) and Central Board of Secondary Education (CBSE) performed better. Bangalore performed lower than the other metros.

The study states that students' skills in map reading, writing, measurement and general awareness are not well developed. It found that healthier classroom atmosphere was correlated with students' values and interpersonal skills.

Schools on an average spend 9% and 10% each of time respectively on physical education/sports, and co-scholastic activities (music/art/ dance/elocution/dramatics).

A comparison of beliefs in student discipline showed that the more the principals and teachers believe that strict discipline is important, the lower was their student performance. A total of 23,000 students, 790 teachers, 54 principals from 89 schools participated in the study. ❑

40% of Karnataka kids in Class 3, 4 can't read Class 1 textbook

Primary education in Karnataka is left wanting in its most crucial aspect — learning — although some facilities required in schools have improved. Experts say this trend highlights that improving facilities have diverted the attention and taken the steam out of the efforts of improving learning among schoolchildren in the state. This is the finding of the Annual Status of Education Report (ASER)-2011 which surveyed 781 schools in the state as part of a countrywide exercise that involved 14,283 schools.

Now the shocker: In Karnataka, at least 40.3% of schoolchildren in class 3 and 4 cannot read a class 1 textbook, while more than half of them (52.5%) cannot do subtractions. This, despite the fact that 85.3% of children in class 1 and 2 can read letters and words and at least 85.8 can recognize numbers from 1-9 and more. This indicates a disheartening trend of children either losing interest in learning or there being a hidden flaw in the system by which the children are taught.

According to the report, this poor performance among the mid-primary schoolchildren in learning is matched by only some facilities in the schools across the state being improved.

Office rooms, store rooms, useable toilets (including the ones for girls), drinking water, playgrounds and boundary walls have considerably improved. For instance, 81.9% of schools have drinking water facility, compared to 75.8% in 2010; 44.2% have useable toilets, compared to 38.4% in 2010; 71.1% have playgrounds, compared to 66.2% last year; and 94% have kitchens for cooking, compared to 92.8% in the previous year.

But the percentage of teaching and learning materials has come down. There is no significant increase in the number of library books available for the children (92.4% in 2010 and 92.6% in 2011); even where the books are available, the percentage of children using them has come down considerably, with only about 57.8% using them compared to 64.8% in 2010.

The data shows that when it comes to teaching and learning materials, the schools fare poorly compared to the previous year. In 2010, 97.3% of teaching and learning materials were observed in class 2, compared to 95.8% in 2011; in class 4, 2010 saw 92.4% against 90.4% in 2011. This perhaps explains the disparity in the learning among students of class 1 and 2, on the one hand, and those from class 3 and 4, on the other. "Since the implementation of the RTE, the government is looking at improving infrastructure in schools such as building compound walls and girls toilets. However, this has shifted its focus from the most important aspect - quality of education in classrooms," said Madhav Chavan, founder and CEO of Pratham, an NGO which facilitates the survey.

Manjula Raman, principal, Army Public School, says, "I've noticed that by the time children are in class 3, they already look tired and stressed out. Parents get paranoid about homework which adds to the stress levels of children. The fun in learning just vanishes and so does their general happiness."

Mansoor Ali Khan, member, board of management, Delhi Public School, Bangalore and Mysore, says: "It's still essential to make a class interesting. The transition from UKG to class 1 should be smooth, because there tends to be a jump in academics. When the transition is not smooth, and the workload is more than the child can handle, problems begin. Although technology is available, it is important to see how it is used. My personal opinion is that formal education should start at age 6. ❑

Half of Class 5 kids can't read Class 2 texts

An authoritative annual report on the status of school education in India has confirmed the bad news from the international PISA ratings last month.

The Annual Status of Education Report (ASER) 2011, prepared by the NGO Pratham, shows that both reading and arithmetic abilities — already disappointing — have further worsened since last year.

The report was released by Human Resource Development Minister Kapil Sibal recently. The PISA ratings put Indian children at the bottom of the global heap in the test of scholastic performance.

The all-India figure for the proportion of children in Class 5 able to read a Class 2 text has dropped from 53.7% in 2010 to 48.2% in 2011, shows ASER. The decline is most pronounced in the northern states. Gujarat, Punjab and Tamil Nadu have, however, improved since 2010.

The fall in arithmetic abilities is seen across all states. Nationally, the proportion of Class 3 children able to solve a 2-digit subtraction problem with borrowing has dropped from 36.3% in 2010 to 29.9% in 2011. Among Class 5 children, the ability to do similar subtraction problems has dropped from 70.9% in 2010 to 61.0% in 2011.

Sibal called for a "proactive" role from states, saying the responsibility of education lay "squarely on their shoulders".

The Pratham report, however, shows improvement in enrolment levels. A total 96.7% of 6-14-year-olds in rural India are now enrolled in school, and the dropout rate has been arrested considerably.

❑ **D P Chaudhri & Raghbendra Jha**

The approach paper for the 12th Five-Year Plan with focus on faster, sustained and inclusive growth is candid and forward-looking. On poverty reduction, the document notes, without comment, the annual trend decline of 0.8% accelerating to 1% during 2004-05 to 2009-10, against a promised target of 2% in the 11th Plan. It emphasises that India will easily meet the Millennium Development Goals (MDGs) of halving poverty by 2015, over 25 years.

Efforts under Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) since 2002, through substantially higher enrolments, have created the illusion that out-of-school children (OoSC; we refer to them as child labour and nowhere children) are a very small proportion of child population. This, we believe, is a serious error of judgment because the spirit of RTE is violated.

This document, however, does not estimate or report on 'children in poverty'. Further, child poverty is not a serious input in the process of planning for poverty reduction, or for the implementation of the Right to Education (RTE). Our estimates indicate that 1 in 3 children lived in poverty in 2004-05 and that, at the above implied rate of poverty reduction, this number was in the vicinity of 100 million in 2009-10.

Teacher absenteeism, need for community involvement, need to eradicate private tuitions and poor learning outcomes are discussed often. And the need to tackle these problems is also highlighted. However, the stark reality that each one of these is a case of 'management failure' is not underscored, although such an inference would be obvious to enlightened citizens.

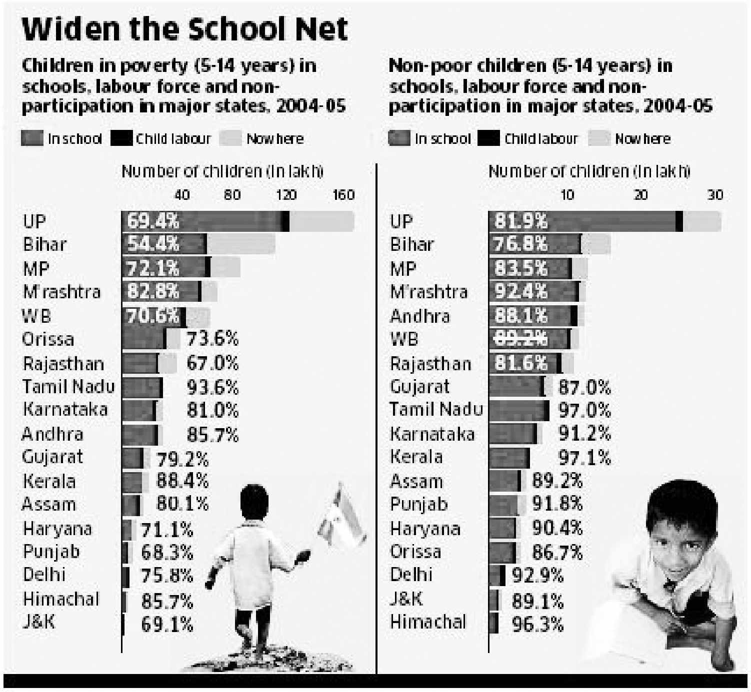

Mal-nutrition Education Link

It took over five years to work on RTE. The number of children in need of education was known at the state, district and even household level. What were we doing during 10th and 11th Plan periods? There are many ways to tackle these issues, if we have the will to deal with them.

Analytically, eight years of quality school education meeting national standards envisioned by RTE in India has three distinct segments, with minimum overlap. First, the best quality education that money can buy with direct and indirect government support. Upper-income Indians keep this segment well managed and resourced, and also insulated. The RTE requires that 25% of their enrolments come from excluded children from their neighbourhoods. State needs to ensure that we keep potential Dronacharyas from treating them as Eklavyas.

Second, quality education that follows the principles of demand and supply is delivered efficiently at a reasonable cost with as much subsidy from the state has been growing as fast as our middle class and aspirational lower strata of society. The middle class, estimated at 350 million, with less than one child in each family has been demanding and getting such education for the last several decades. The 25% rule under RTE applies to this large and growing segment as well.

Finally, beneficiaries of SSA since 2002 are the residual category consisting of approximately of half of India's 365 million (under-15) children as per census 2001. That a large part of this group of children is growing up in households living in absolute poverty needs to be the focus in the 12th Five-Year Plan. Child poverty reduction and RTE are organically intertwined. Treating them as separate issues of poverty and RTE, we believe, would be a serious mistake.

Implementation of RTE is a legal obligation and a constitutional responsibility. Resource constraints or teacher shortages are not admissible reasons, either in a court of law or in a democratic society hoping to be egalitarian. Following the spirit of RTE, the three segments of elementary school education will get linked if the 25% rule is seriously implemented.

Institutional arrangements under RTE are to be in place within three years from 2010. The 12th Five-Year Plan would have very little time to ensure their functioning. The informational and knowledge base is with the Planning Commission; awareness of the urgency and links to faster and inclusive growth is needed. In the first graphic, we provide a snapshot picture of schooling and OoSC across states for 2004-05. We present data for children (aged 5-14) in poverty separately from that for the non-poor. Children growing up in poverty constitute a much larger proportion of exclusion from schooling compared to children growing up in non-poor households. Large, Empowered Action Group (EAG) states have much larger shares of exclusion than non-EAG states. Kerala, Tamil Nadu and Himachal Pradesh have over 90% of children in schools. Even in these states, the gap between the poor and nonpoor persists at around 10%.

Efforts under Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) since 2002, through substantially higher enrolments, have created the illusion that out-of-school children (OoSC; we refer to them as child labour and nowhere children) are a very small proportion of child population. This, we believe, is a serious error of judgment because the spirit of RTE is violated.

Large and increasing gender bias in children aged 0-6, and lower participation of girls in schooling from poor and socially-disadvantaged sections, analysed in Chaudhri and Jha (2011 a,b), require particular attention if inclusive growth is to become meaningful. The demographic dividend has already been accruing to the sections of the population in categories (a) and (b) above and needs to percolate down to the population in category (c), failing which the country runs a high risk of being caught up in the middle-income trap. The Planning Commission's poverty reduction and education divisions need to coordinate with each other. The improved policy outcomes from this are likely to be strengthened by a specialist seminar involving Unicef and India's think tanks working in these areas. ❑

(D P Chaudhri is with Monash University and R Jha is with Australian National University)

Sibal seeks change in 'socially stratified' education system

Union HRD Minister Kapil Sibal sought a change in the country's education system which, he said, was "socially stratified" with graduates of elite universities becoming the managerial class.

"Thus far we have had an education system that is socially stratified... Graduates of a few elite universities such as the IITs and IIMs become the managerial class that run the Indian state and the industry. This is changing and must change," he said at the inauguration of the 125th birth anniversary celebrations of Maths wizard Srinivasa Ramanujan in Chennai.

Despite the triumph of India's democracy, large sections of the society continue to remain marginalised and disempowered mainly due to the lack of eduation, he said. He said courageous teachers here and there were attempting to keep the vibrant current going but they were in minority "with the odds heavily loaded against them". Decline in areas of humanities and social science is taking place. "This is accentuated by the basic changes taking place in the balance in power in India with the unprecedented rise of the corporate sector." Jobs in state sector had stagnated while those in corporate and informal sectors have grown exponentially, he said.

One consequence of this was "a drastic alteration" of priorities in higher education among the upper sections of Indian society, Sibal noted. Prestige and financial returns acquired from participation in the global economy far outstrip most of what Indian economy can offer.

"The effect has been to pull educated classes in large numbers into the global economy leaving behind a vacuum whose impact we are still trying to cope with," he said.

This had even resulted in drastic reduction of elite in areas of Maths, Humanities and Social Sciences, leading to shrinking or closure of the departments, he said.

The crisis in learning

❑ **Rukmini Banerji**

The Annual Status of Education Report (ASER) 2011 was released on January 16. Data collected from 558 rural districts, over 16,000 villages, 3.3 lakh households and 6.3 lakh children point to two clear national trends. Both of these need to be better understood, as they have important implications for growth and equity in India.

First, nearly 50 per cent of rural children (age 6-14) pay for their education either in a private school or to a private tutor and benefit from this personal investment. As far are private inputs into elementary education are concerned, Indian states and regions can be neatly categorised into slabs. On the one hand, states in the northern belt — Jammu & Kashmir, Punjab, Uttarakhand, Haryana, Rajasthan and Uttar Pradesh — have private enrollment levels that are above 30 per cent, and rising. In the Northeast, more than 40 per cent of all rural children in Nagaland, Manipur and Meghalaya are enrolled in private schools. South of the Vindhyas, between 30 to 40 per cent of rural children in Maharashtra and Andhra Pradesh go to private schools. And then there is Kerala, where children attending government schools are now in a minority (at 40 per cent).

On average, across Std 1-5 close to 50 per cent of all children take paid classes outside of school. Adding together the proportion of children who go to tuition classes along with those who go to private schools we find that half of all children access some form of private education services

On the other hand, there are states like Bihar, Odisha, Jharkhand and West Bengal, where private school provision is low and most children attend government schools. Here the additional supplement for learning comes in the form of "tuition" classes . On average, across Std 1-5 close to 50 per cent of all children take paid classes outside of school. Adding together the proportion of children who go to tuition classes along with those who go to private schools we find that half of all children access some form of private education services the HRD ministry's calculations for 2008-10 suggest that the current average per child expenditure by government is close to Rs 6,314 per year. The budget for Sarva Shiksha Abhiyan, Government of India's flagship scheme for elementary education, has gone from Rs 7166 crore in 2005-2006 to about Rs

21,000 crore last year. Despite the rising expenditures on elementary education, parents seem to be increasingly "voting with their feet" and choosing private options. In the last five years since ASER started its annual measurement, private school enrollment across rural India has gone from 18.7 per cent to 25.6 per cent and some states getting close to the 50-50 mark. If this trend continues, then it is not impossible that in five years, children going to government schools will become a minority in India.

The second headline from ASER 2011 has to do with the low level of basic learning outcomes of children, especially in reading and arithmetic. This estimate is half of all children in Std 5 cannot read Std 2-level text. Forty per cent of Std 5 students cannot correctly solve a 2-digit subtraction problem with borrowing. But this is not news anymore. For the last six years, ASER has been reporting similar findings. What is new is the hint that the already low levels may be witnessing a further decline. This year's ASER findings indicate that learning levels are lower as compared to last year, especially in government schools in the Hindi-speaking states.

Domestic efforts at measurement of learning outcomes such as the annual ASER surveys, periodic studies by Educational Initiatives and NCERT are increasing. There is also an accumulating body of research by internationally known academics such as Abhijit Banerjee and Esther Duflo, Karthik Muralidharan and Lant Pritchett. Taken together, these point to a serious and deep crisis in learning in primary schools. The recent, much publicised PISA 2009+ result is the latest addition to the list. Many of these studies go beyond pointing to the problem, they also outline what "works".

The growing body of empirical evidence shows that the increased expenditures in education are not translating into better outcomes. Yet, the Central government remains steadfastly focused on inputs and outputs and does not seem able or willing to bring issues of children's learning to the centre of the stage either in policy or in practice. There is no shift towards tackling the problem of low learning in a direct manner. Nor is there any effort to understand how expenditures can be made more effective in terms of learning outcomes.

In a way, the provisions and norms of the RTE are used to justify the continued thrust on inputs. Much of the substance of the results framework of the annual planning documents in elementary education continue to be concerned with infrastructure, teacher recruitment and training. There is only a fleeting mention of reporting of learning outcomes towards the fag end of the list.

In the SSA planning documents, there are only two line items where states and districts can directly plan and implement learning improvement programmes if they should wish to do so. These are (a) the innovation grant of Rs 1 crore per district, and (b) the learning enhancement programme. Together these account for less than 1 per cent of the total education budget (and 3 per cent of SSA budget in 2010-11). Expenditure tracking efforts by Accountability Initiative indicate that these expenditures are slow and tend to happen towards the end of the financial year (which is also the end of the school year). Expenditure on teacher training is about 2 per cent of the total SSA budget in 2010-11. Given the current guidelines by Government of India, it is not clear how a massive push for improvement of learning outcomes will be fuelled, if at all the government at any level should want to do so.

The writing on the wall is clear and it is getting bigger and bolder each year. Ordinary people are able to read it. People are voting with their feet and trying to effectively use the resources they have to get the "best" education their money can buy. But policy makers and planners and those who control the expenditure of public funds on education are either unable or unwilling to read this writing on the wall. Without basic education, the future of children is grim. If 100 million children today do not get even the basic skills of reading and arithmetic, it is unlikely that India will grow into a mature economy or a mature democracy.

The right to education promises many things. In addition to teachers in every class, drinking water, boundary walls and so on, it speaks of quality education at the appropriate age-grade for all children. By just providing inputs we are not bringing in equity. Unless the entire expenditure and the effort behind the provision of schooling is translated effectively into learning outcomes, the real battle for equal opportunity will be lost and our large and growing public expenditure in education wasted.❑

(The writer works with Pratham and ASER Centre)

Good science is not possible without freedom of thought: Ramakrishnan

The idea of favouring experiment and observation over belief, and the empirical over the anecdotal, which was at the core of the evolution of modern science, continues to be its most important guiding principle, Nobel laureate Venkatraman Ramakrishnan has said.

The Joint Head of the Structural Studies Division at the MRC Laboratory for Molecular Biology, Cambridge in the U.K., was delivering the second S.V. Narasimhan Memorial Oration under the auspices of the Bharatiya Vidya Bhavan here on Thursday.

It was also not possible to have good science without freedom of thought, which was important for the development of science since the era of The Reformation in the 16 century. "It is not possible to have very good science for sustained periods without complete freedom of thought," said Dr. Ramakrishnan, who was born in Chidambaram, Tamil Nadu.

The scientist, hailed for his path-breaking work on ribosomes that got him the Nobel Prize for Chemistry in 2009, pointed out that modern science had its origins in the times of Copernicus and Galileo, who were proponents of the idea that if observation and belief failed to tally, it was the belief that was deemed to be wrong rather than what was observed.

This idea was helped by the spirit of Reformation across Europe in the 16 century. It not only spawned a distrust of authority and freedom of thought, but also led to competing views of science — one that attached importance to the elegance of theory and a scientist's stature and the other that debunked anything, however beautiful or whoever the votary, if the proposal was not verifiable by experiment.

Eventually, the empirical view won out and had since shaped the modern outlook of science, which had the capacity to transform societies. Pointing to the motto — "On Nobody's Word" — of the Foundation of the Royal Society, one of the oldest scientific societies in the world, Dr. Ramakrishnan said this principle had come to define modern science. Many widespread beliefs failed the evidence-based test and yet got perpetuated primarily because of the human nature's difficulty in separating cause from coincidence. While the human predisposition to recognise patterns had had good consequences — leading to mathematics, music and art — it also made us imagine patterns where they didn't exist, he said.

Dr. Ramakrishnan illustrated the missing link between correlation and causality by pointing out that the mere correlation between the stork population and the birth rate in a nation did not establish the myth that storks bring babies.

His personal view was that the mind-boggling proposition by the European Organisation for Nuclear Research (CERN) about neutrinos travelling faster than light would go the way of the debunked Cold Fusion theory (1989).

The important thing, however, was that science, by its nature, was self-correcting — as new evidence emerged, scientists refined their hypotheses and theories. "It is this built-in self-correction that distinguishes science from other systems of belief. In science, it is not bad to be wrong, but it is bad definitely to falsify."❑

(Chairman of the Bhavan's Chennai Kendra T.S. Krishnamurthy and S.N. Srikanth, CMD of the Hauer–Diana Group of companies and son of S.V. Narasimhan participated.)

Birth anniv. of Swami Vivekanand Celebrated

On the auspicious occasion of 150th Birthday Celebration of Swami Vivekananda, a programme titled 'Kartavya Bodh Diwas' was organized by the Rashtriya Shaikshik Mahasangh (RSM) in the Seminar Gallery of TGCE on Jan 12. Speaking as the chief guest on the occasion, the Principal Sceretary (Fin.) Shri Jalaj Shrivastava highlighted on various aspects of the life of Swami Vivekananda. He also stressed the importance of quest for knowledge which was one of the main mottos of Vivekananda.

The spekers highlighted the life history, philosophy and contribution of Swami Vivekananda towards humanity. Shri Francis Xavier, HOD, English Dept., JNRM, Dr. (Mrs.) Manju Nair, Associate Prof., Dept. of Geography, JNRM, Ms. Sunnaina Suresh, U.G.Ed Trainee Shri Manoj Kumar Yadav, B.Ed. Trainee and Dr. J.D. Singh, Principal, TGCE were the main speakers of the seminar.

Earlier, in his welcome address, Shri K.N. Suresh, Convener of Rashtriya Shaikshik Mahasangh highlighted the aims and objectives of the organization. Dr. R.K. Tiwari, Asst. Professor proposed the vote of thanks, a communication received here said.

Action for Girl's education

❑ Aaditi Isaac

Nearly two-thirds of children who are denied their right to education are female. At the World Education Forum, Dakar, 2000, countries agreed on ensuring that by 2015 all children, particularly girls, will have access to complete free and compulsory education of good quality. As we approach 2012, what is the status of girls' education in India? A focus on girls' education was put in place since the 1986 National Policy on Education and the 1992 Programme of Action, followed by the SSA programme launched in 2001, National Curriculum Framework in 2005 and the National Curriculum Framework for Teacher Education in 2010. These policies were complemented by other schemes such as National Programme for the Education of Girls at the Elementary Level, Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya Scheme, both ensuring inclusion and quality education for girls. The Mahila Samakhya programme was launched in 10 states targeting marginalised sections of rural women. Access to education was also facilitated by separate schools for girls, availability of open learning resources, residential schooling, coaching facilities; scholarships, textbooks, uniforms and transport including bicycles. The Right of Children to Free and Compulsory Education (known as RTE) Act, 2010, charted a new roadmap for gender equality in education in India.

Despite all these efforts, surprisingly, a large number of girls still remain outside the education system. According to Karin Hulshof, Unicef India representative, out of 81% girls joining school

at the primary level, around 50% drop out at the secondary level because of factors such as child marriage, child labour, etc. "We must not look at girls as a liability but as an asset. The Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) and Right to Education (RTE) Act are tools that can empower the girl child. We need an effective delivery mechanism and have more gender-friendly classrooms," she said. R Govinda, vicechancellor, National University of Educational Planning and Administration (NUEPA), feels that though there are various policies in place, when it comes to implementation, there is a wide gap. "Through various policies we have placed the education of the girl child in the foreground. I feel, policywise, we are on the right track. The RTE has made education a fundamental right. After 25 years of prioritising girls' education, we have seen a tremendous change. But a lot more needs to be done." He further adds, "We can address the problem by engaging at different levels. By getting all girls in school, by examining what happens in school by paying attention to the socio-emotional conditions of the girl child, what the child learns in class in terms of the quality, by providing trained female teachers and keeping a track of what happens to girls beyond schools. That is when the expectations of parents and the community come into effect."

National Vision

The United Nations Children's Fund (Unicef) and ministry for human resources development (MHRD) drafted a 'National vision for Girls' Education in India - Roadmap to 2015' with an aim to building a comprehensive approach towards girls' education, which was discussed at a twoday national convention in the Capital recently. The Vision Document provides a framework for action for girls' education in India. The plan of action for the next one year is the Shiksha Ka Haq Abhiyan which will be the cornerstone for the implementation of RTE. The government will engage with the community, media, states, and other stakeholders to create an environment and mechanism to ensure implementation at every level for girls' education. ❑

107वें जन्म दिन पर

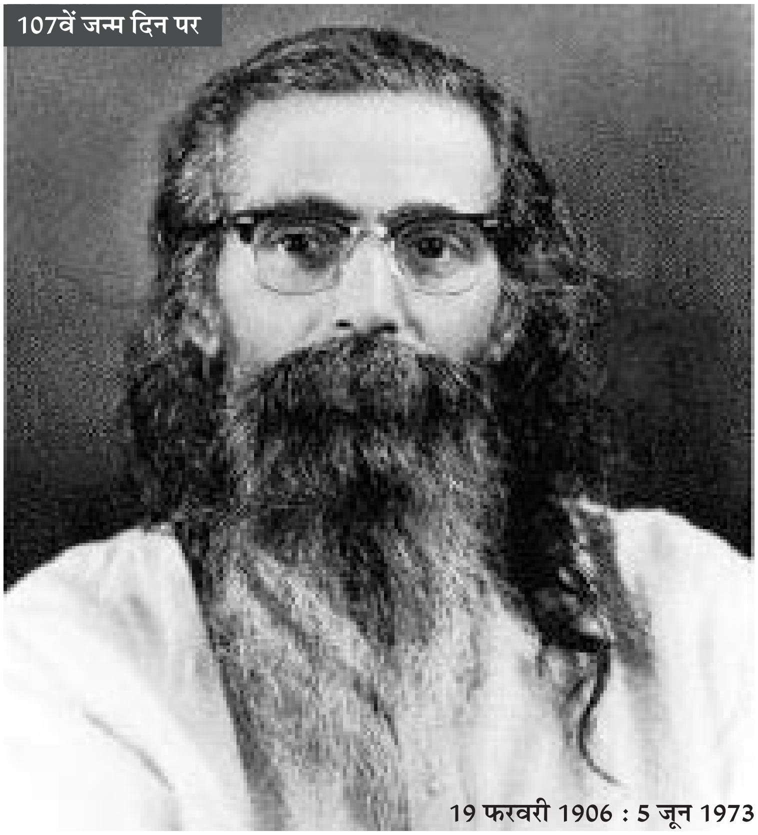

19 फरवरी 1906 : 5 जून 1973

अनुकरणीय शिक्षत्व के धनी श्री गुरुजी

❑ विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर को 'गुरुजी' जैसे अत्यन्त छोटे संबोधन से पहचाना जाता हो मगर उनका व्यक्तित्व उनके नाम की तुलना में बहुत अधिक विशाल रहा है। शिक्षक के पुत्र के रूप में जन्में अत्यन्त मेधावी इस बालक ने आगे चलकर शिक्षत्व का जो आदर्श प्रस्तुत किया वह आज भी अनुकरणीय है।

प्राणीशास्त्र में एम.एस.सी. व मत्स्य पालन में संक्षिप्त अनुसंधान करने के बाद परिस्थितियों ने माधवराव को जीविका-उपार्जन के लिए विवश कर दिया था। माधवराव ने अध्यापन को अपना कार्य क्षेत्र चुना और 1931 में काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में प्राध्यापक बन अध्यापन करने लगे। माधवराव के प्राध्यापकीय जीवन का नजदीक से अध्ययन करने पर एक एक कर कई अनुकरणीय गुण हमारे सामने स्पष्ट होते चले जाते हैं।

माधवराव जी का एक बड़ा गुण था उनकी अध्ययनशीलता। विश्वविद्यालय का विशाल पुस्तकालय माधवराव का सर्वाधिक प्रिय स्थल था। पुस्तकालय में बैठ एक ही दिन में कई कई पुस्तकें पढ़ जाना उनके लिए सामान्य बात थी। पुस्तक पढ़ने के आनन्द में डूबे माधवराव बिच्छू के डंक की पीड़ा भी सहजता से भूल जाते थे। इस अध्ययनशीलता के चलते ही संघ कार्य में व्यस्त होने के बाद भी इन्होंने 1935 में विधि स्नातक की उपाधि प्राप्त की। श्री वामनराव वाडेगांवकर के सानिध्य में पंचदशी व अद्वैत सिद्धि का अध्ययन किया। श्री सांवलाराम के साथ कठिन अभ्यास कर बांसुरी, सितार और वीणावादन में निपुणता प्राप्त की। यह गुण जीवन पर्यन्त उनका प्रिय साथी बना रहा।

ऐसे बने गुरुजी

प्राध्यापक के रूप में माधवराव का जीवन यह सन्देश देता है कि विद्यार्थी ही शिक्षक का प्रथम आराध्य होता है। माधवराव के प्राध्यापक बनने का तात्कालिक कारण अर्थोपार्जन था। पारिवारिक दायित्वों के निर्वाह हेतु ही उन्होंने वह पद स्वीकारा था। ऐसे में माधवराव द्वारा अपने वेतन का एक बड़ा भाग जरूरत मंद विद्यार्थियों की मदद हेतु खर्च कर देना बहुत बड़ी बात थी। माधवराव महाविद्यालय में शिक्षण करते समय तो विद्यार्थी हितों का ध्यान रखते ही थे मगर इसके बाद के समय मे भी पढ़ने में बहुत से विद्यार्थियों की मदद किया करते थे। इसके लिए उन्हें अपने विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का अध्ययन करना पड़ता था। माधवराव की इस मदद से प्रभावित विद्यार्थियों ने ही सम्मानवश उन्हें 'गुरुजी' का सम्बोधन देना प्रारम्भ किया था। 'गुरुजी' सम्बोधन का स्नेहसूत्र इतना मजबूत सिद्ध हुआ कि वह सदा-सदा के लिए उनसे जुड़ा रहा।

विक्रमादित्य का सिंहासन

अन्तर्द्वन्द हर व्यक्ति के जीवन में आते हैं। अधिकांश लोग अन्तर्द्वन्दों के जाल में उलझ कर रह जाते हैं मगर जो अन्तर्द्वन्दों को पार कर आगे बढ़ जाते वे महान बन जाते हैं। समय आने पर गुरुजी की माँ ने उनके विवाह के प्रयास प्रारम्भ किए। गुरुजी का अन्तर्द्वन्द यह था कि

वे नहीं तो विवाह करना चाहते थे और नहीं इन्कार कर माँ का मन दुखाना चाहते थे। गुरुजी ने विवाह से इंकार नहीं किया मगर माँ को दृढ़तापूर्वक बता दिया कि विवाह उन्हें सुख नहीं दे सकेगा। इसके बाद माँ ने कभी विवाह का आग्रह नहीं किया। गुरुजी के जीवन का इससे भी बड़ा अन्तर्द्वन्द वैचारिक था। गुरुजी स्वामी विवेकानंद से बहुत प्रभावित थे। नागपुर के रामकृष्ण आश्रम से भी उनका निकट का सम्बन्ध था। डॉ. हेडगेवार के सम्पर्क में आने पर उनसे व उनके मिशन से भी बहुत प्रभावित हुए। रामकृष्ण आश्रम या राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, यह गुरुजी का दूसरा अन्तर्द्वन्द बन गया। एक दिन चुपचाप नागपुर छोड़ सारगाछी के रामकृष्ण आश्रम में स्वामी विवेकानंद के गुरुभाई स्वामी अखण्डानंद की सेवा में पहुँच गए। स्वामी जी ने इनके मन की पीड़ा को समझा और दीक्षा देने के बाद सन्यासी बनाने की बजाय समाजहित में सार्वजनिक कार्य करने का निर्देश उन्हें अन्तर्द्वन्द से मुक्त करने के साथ ही ऐसी राह दिलाई जिस पर वे जीवन भर दृढ़ता से चलते रहे।

विचारों की दृढ़ता, जीवन की सरलता, स्पष्टवादिता, मृदुभाषिता आदि अन्य अनेक गुण भी गुरुजी को एक अनुकरणीय शिक्षक बनाते हैं। सर संघचालक जैसा महत्वपूर्ण पदभार ग्रहण करते समय उन्होंने जो भाव प्रकट किए यदि उसे आमतौर पर अपना लिया जावे तो हमारे समाज के संकट स्वत: ही दूर हो सकते हैं। गुरुजी ने कहा था कि सर संघचालक का दायित्व विक्रमादित्य का सिंहासन है और वे उसपर बैठे गड़रिया बालक हैं। गीता में ईश्वर को कर्तामान कर उसके प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के उपदेश को गुरुजी ने बहुत अत्यन्त सुन्दर रूप से प्रस्तुत किया है।

श्री गुरुजी वर्तमान सूचना प्रधान शिक्षा प्रणाली को समाप्त कर संस्कारात्मक शिक्षा व्यवस्था लागू करने के पक्ष में रहे हैं। गुरुजी कहते थे कि वर्तमान शिक्षा बच्चे को डिग्री प्रदान करती है जिससे बच्चा नौकारी के योग्य तो हो जाता है मगर इससे समाज का भला नहीं होता। हम देख रहे हैं कि पद पाकर व्यक्ति हर प्रकार से धन कमाने लगता है। इससे समाज की परेशानियाँ बढ़ रही हैं। आज भ्रष्टाचार के विरोध में सड़क पर उतरता विशाल जनसमूह गुरुजी की बात को प्रमाणित करता है।

शिक्षा ध्येयोन्मुख हो

गुरुजी वर्तमान सूचना प्रधान शिक्षा प्रणाली को समाप्त कर संस्कारात्मक शिक्षा व्यवस्था लागू करने के पक्ष में रहे हैं। गुरुजी कहते थे कि वर्तमान शिक्षा बच्चे को डिग्री प्रदान करती है जिससे बच्चा नौकारी के योग्य तो हो जाता है मगर इससे समाज का भला नहीं होता। हम देख रहे हैं कि पद पाकर व्यक्ति हर प्रकार से धन कमाने लगता है। इससे समाज की परेशानियाँ बढ़ रही हैं। आज भ्रष्टाचार के विरोध में सड़क पर उतरता विशाल जनसमूह गुरुजी की बात को प्रमाणित करता है। अत: गुरुजी का यह विचार महत्वपूर्ण है कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को समाप्त कर ऐसी शिक्षा प्रणाली खड़ी की जावे जो व्यक्ति को आचरणवान बनाने वाली हो। भारत के सच्चे इतिहास को बच्चों को बताया जावे। महान भारतीयों के जीवन के विषय में बच्चों को पढ़ाया जावे। बच्चों की ग्रहणशील आयु में सत् संस्कारों से यह सत्य अंकित कर देना चाहिए कि व्यक्ति अपने कर्त्तव्य को सर्वोपरी महत्व देने लगे। हमारी शिक्षा ध्येयोन्मुख हो। प्रत्येक मनुष्य परम सत्य के पथ का पथिक होता है। उसे यह बताया जाना चाहिए कि नि:स्वार्थ भक्तिपूर्ण सेवा के द्वारा ही सत्य को पाया जा सकता है।

गुरुजी का कहना था कि शैक्षिक संस्थाओं के साथ छात्रावासों की सुविधा देकर ही संस्कार युक्त शिक्षा दी जा सकती है। संस्कारवान शिक्षक के सानिध्य में रह कर ही बच्चे संस्कारवान बन सकते हैं। बच्चों को सहज बनाने के लिए उनके साथ प्रेमपूर्ण तथा आत्मीयता का व्यवहार किया जाना चाहिए। शिक्षकों की सामाजिक प्रतिष्ठा का ध्यान रखने के साथ ही यह भी देखना होगा कि शिक्षकों पर अधिक भार नहीं डाला जावे।

गुरुजी के विचारों को कार्य रूप देने की दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का अर्थ ऐसी शिक्षा प्रणाली से है जिससे पढ़ा प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर अपना कर्त्तव्य निर्धारित करे। राष्ट्रहित का पालन करे। स्पष्ट है कि ऐसा होने पर ही भ्रष्टाचार व अकर्मण्यता जैसे राष्ट्रव्यापी दोषों को नियन्त्रित किया जा सकता है। पुनरुत्थान ट्रस्ट अहमदाबाद (गुजरात) द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की रूपरेखा बनाने का कार्य राष्ट्रीय गोष्ठियों की श्रृंखला के माध्यम से किया जा रहा है। भारत जैसे विशाल देश में शिक्षा व्यवस्था में सुधार करना अश्वमेघ यज्ञ के समान कठिन है। इसकी सफलता हेतु सभी की भागीदारी जरूरी है। गुरुजी के जन्म दिन पर उनको स्मरण करने की सार्थकता तभी है जब हम शिक्षा संबन्धी उनके विचारों को कार्यरूप देने का प्रयास करें। सभी सुधारों का मार्ग विद्यालय से होकर ही जाता है। ❑

आने वाले कल की शिक्षा

❑ नारायण रामास्वामी

आज भारत विराट आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों की दहलीज पर खड़ा है। पिछले कुछ समय में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जिस तरह की आर्थिक-राजनीतिक उथलपुथल देखी गई है, उसके मद्देनजर 'तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था' और 'आगामी महाशक्ति' जैसी उपाधियों का निर्वाह कर पाना भारत के लिए बहुत आसान नहीं रहा है, लेकिन इसके बावजूद अगर भारत से उम्मीदें बांधी जाती हैं, तो इसकी वजह हैं उसके युवा। भारत के 1-2 अरब लोगों में से अनुमानित रूप से आधे 25 वर्ष की आयु से कम हैं, जिस कारण जन-संसाधन के लिहाज से उसे अन्य देशों पर एक महत्वपूर्ण बढ़त प्राप्त होती है। आंकड़े बताते हैं कि एक दशक के भीतर भारत के पास अन्य बड़ी अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में युवाओं की कहीं विशाल आबादी होगी, लेकिन इतने युवाओं को शिक्षित करने व कार्यकुशल बनाने के लिए हमारे पास पर्याप्त शैक्षिक संस्थान नहीं हैं। यदि भारत को अपनी युवाशक्ति की संपूर्ण संभावनाओं का दोहन करना है तो उसे दो लाख नए स्कूलों, 50 हजार नए कॉलेजों और एक हजार नए विश्वविद्यालयों की दरकार होगी।

शिक्षा में निवेश और उसके नतीजे

जहां शैक्षिक संस्थाओं की कम संख्या एक समस्या है, वहीं उनकी गुणवत्ता का सवाल इससे भी महत्वपूर्ण है। यह कितनी बड़ी विडंबना है कि हमारा आर्थिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, लेकिन हमारा शैक्षिक तंत्र पुरातनपंथी बना हुआ है। शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें यदि उपयोगी व प्रासंगिक परिणाम न मिलें तो उसमें निवेश किया गया सारा धन बर्बाद हो सकता है। हमारे यहां एक स्नातक को अपने नियोक्ता संस्थान के लिए 'प्रासंगिक' सिद्ध होने में जितना समय लगता है, उससे इसकी पुष्टि होती है। मेरा मत है कि जल्द ही भारत में आधुनिक समय की मांगों के अनुरूप शैक्षिक पाठ्यक्रमों पर अधिक जोर दिया जाने लगेगा। ये वे पाठ्यक्रम होंगे, जो कॅरिअर के बढ़ते विकल्पों को ध्यान में रखकर निर्धारित किए जाएंगे। औपचारिक और व्यावसायिक शिक्षा को एकीकृत करने के भारत सरकार के प्रयासों के साथ ही नेशनल वोकेशनल एजुकेशन क्वालिफिकेशन फ्रेमवर्क (एनवीईक्यूएफ) को प्रस्तुत करने से कौशल निर्माण व व्यावसायिक शिक्षा से संबंधित अनेक पाठ्यक्रमों के लिए रास्ता तैयार होगा।

पेशेवर कौशल और सेक्टर केंद्रित कोर्सेज

मीडिया, मनोरंजन, फैशन, हाईएंड रिटेल जैसे उभरते हुए क्षेत्रों के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रमों की आवश्यकता है। भारतीय कॉर्पोरेट भी इनके महत्व को समझ रहा है।

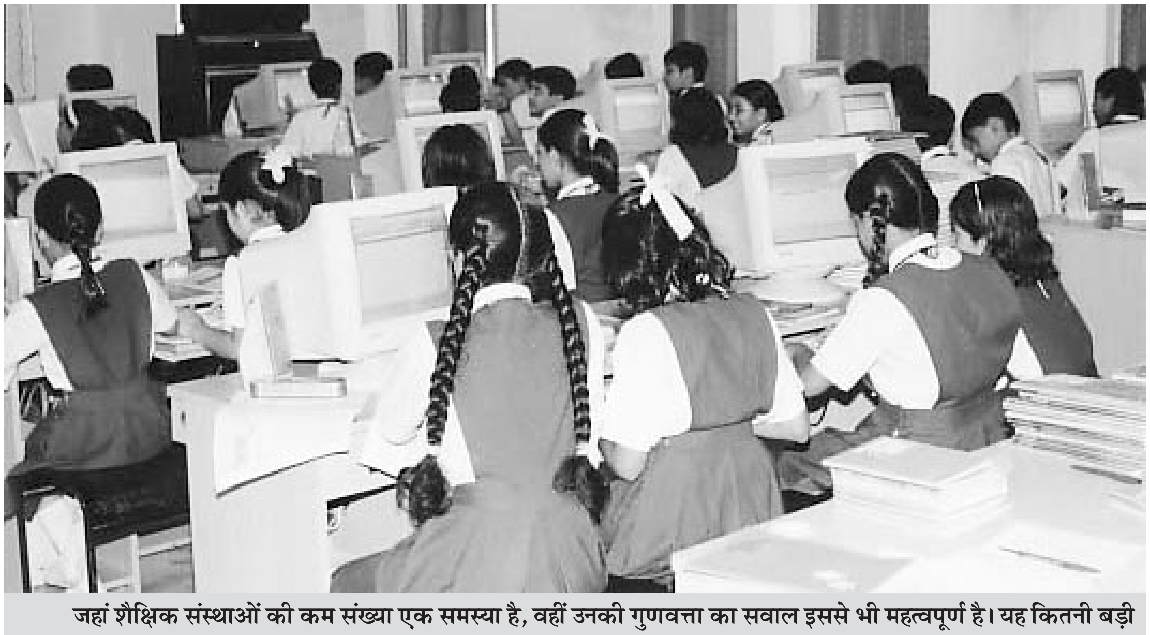

जहां शैक्षिक संस्थाओं की कम संख्या एक समस्या है, वहीं उनकी गुणवत्ता का सवाल इससे भी महत्वपूर्ण है। यह कितनी बड़ी विडंबना है कि हमारा आर्थिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, लेकिन हमारा शैक्षिक तंत्र पुरातनपंथी बना हुआ है। शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें यदि उपयोगी व प्रासंगिक परिणाम न मिलें तो उसमें निवेश किया गया सारा धन बर्बाद हो सकता है।

मुझे लगता है कि आने वाले समय में हम अधिक से अधिक सेक्टर केंद्रित पाठ्यक्रमों को परिदृश्य पर उभरता हुए देखेंगे। उदाहरण के लिए आईआईएम ने ऊर्जा प्रबंधन, अकादमिक संस्थान प्रबंधन, स्वास्थ्य प्रबंधन और कृषि प्रबंधन जैसे नए पाठ्यक्रम प्रस्तावित करने का मन बना लिया है। इसी तरह इग्नू ने भी कृषि, शिक्षा, वाटिका प्रबंधन जैसे विषयों के लिए स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रारंभ किए हैं।

विदेशी विश्वविद्यालयों से लें सबक

विदेशी विश्वविद्यालयों से तुलना करने पर हम पाएंगे कि नए पाठ्यक्रम सृजित करने में हम उनसे अभी बहुत पीछे हैं। अमेरिका के कोलंबिया बिजनेस स्कूल और बोस्टन यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मैनेजमेंट में सामाजिक-उद्यम से संबंधित पाठ्यक्रम रचे जा चुके हैं और हैल्थ केयर में एमबीए पाठ्यक्रम भी प्रारंभ किए गए हैं। मार्केटिंग कला, संस्कृति, मनोरंजन से संबंधित पाठ्यक्रम भी अरसे से पढ़ाए जा रहे हैं।

तैयार करने होंगे उच्च गुणवत्ता के पेशेवर

हमें आईपीएल की सफलता पर ध्यान देना चाहिए। आईपीएल ने क्रिकेट के साथ ही उसके अन्य पहलुओं के प्रति भी व्यावसायिक हितों को प्रेरित किया है, लेकिन यदि हम क्रिकेट में उच्च गुणवत्ता के पेशेवर खिलाड़ी नहीं तैयार करेंगे तो हमें विदेशी संस्थाओं या व्यक्तियों की मदद लेने को विवश होना पड़ेगा। यह बात खेल ही नहीं, हर क्षेत्र पर लागू होती है।

शैक्षिक परिसरों का वैश्वीकरण

पिछले कुछ सालों में हमने यह भी देखा है कि प्रतिष्ठित भारतीय अकादमिक संस्थानों ने विदेशों में अपने कैम्पस स्थापित किए हैं। भारतीय अकादमिक संस्थानों की दक्षिण एशिया में ऐतिहासिक रूप से अच्छी ब्रांड इक्विटी रही है, इसलिए मौजूदा विकासक्रम भी स्वाभाविक ही था। आईआईएम के अलावा मनिपाल और एमिटी जैसे निजी शैक्षिक समूह पहले ही विदेशों में अपनी उल्लेखनीय उपस्थिति दर्ज करा चुके हैं। अपेक्षा की जा रही है कि इसी तरह कई अन्य भारतीय संस्थाएं विदेशों, खासतौर पर अफ्रीका और खाड़ी देशों का रुख करेंगी। दूसरी तरफ विदेशी विश्वविद्यालय भी भारत में अपनी शाखाएं स्थापित करने का प्रयास कर रही हैं। अलबत्ता विदेशी शिक्षा प्रदाता विधेयक अभी भी संसद की सहमति की प्रतीक्षा कर रहा है।

पेशेवर विकास कार्यक्रमों में बढ़ती रुचि

भारतीय कॉर्पोरेट ने भी अपने कर्मचारियों में व्याप्त 'स्किल-गैप्स' को पहचानते हुए पेशेवर विकास पाठ्यक्रमों की ओर अपनी अभिरुचि प्रदर्शित की है। यह शैक्षिक संस्थाओं के लिए एक बड़ा अवसर हो सकता है और व्यवहार कुशलता से लेकर क्रियाशीलता तक से संबंधित पाठ्यक्रम प्रस्तुत किए जा सकते हैं। अलबत्ता इस बात की संभावनाएं कम ही हैं कि विद्यार्थियों की प्राथमिकताएं बदलेंगी। अर्थशास्त्र, वाणिज्य, प्रबंधन, कानून और इंजीनियरिंग जैसे विषय अब भी उनकी वरीयता सूची में बने रहेंगे। वैसे इन दिनों पर्यावरण के प्रति बढ़ती सजगता के कारण पर्यावरण विज्ञान से संबंधित विषय प्रमुखता से उभरे हैं।

स्कूली स्तर से ही हो रही है शुरुआत

अगर सीबीएसई को एनवीईक्यूएफ का प्रीक्वेल मानें तो हम पाएंगे कि पिछले कुछ वर्षों में सीबीएसई में भी व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर रुझान बढ़ा है। सीबीएसई ने पिछले साल ही ग्यारहवीं व बारहवीं कक्षा के लिए जियोस्पेशियल तकनीक, फूड प्रोडक्शन (हॉस्पिटैलिटी और टूरिज्म), फूड एंड बेवरेज सर्विसेस (हॉस्पिटैलिटी और टूरिज्म), मास मीडिया स्टडीज व मीडिया प्रोडक्शन जैसे नए पाठ्यक्रम प्रस्तुत किए हैं। यदि हम अपने युवाओं में छिपी संभावनाओं को सही दिशा दे सकें तो यह साल भारतीय शिक्षा के लिए एक अहम मोड़ साबित हो सकता है। ❑

(लेखक प्रोफेशनल सर्विसेज नेटवर्क के पीएमजी के पार्टनर हैं।)

सरकारी स्कूलों में रखे जाएंगे 8,462 शिक्षक

तमिलनाडु राज्य के उच्च व उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में चालू शैक्षणिक सत्र में 6,872 स्नातक शिक्षक रखे जाएंगे। इसके साथ ही 1,590 स्नातकोत्तर शिक्षक भी सरकारी और नगरीय निकायों द्वारा संचालित उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में तैनात किए जाएंगे। यह सारी कवायद शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए की जा रही है। सरकार ने राज्य के सात सौ स्कूलों को सुविधासंपन्न बनाने के लिए चार सौ करोड़ रुपए का बजट भी आवंटित किया है।

ये घोषणाएं मुख्यमंत्री जे. जयललिता ने की । अधिकृत जानकारी के मुताबिक सरकार का लक्ष्य ज्ञान आधारित समाज की स्थापना के लिए पूरे राज्य में छात्रों को उचित व गुणवत्तायुक्त शिक्षा देना है। इसी मकसद से सरकार ने मुफ्त यूनिफॉर्म देना, साइकिल व लेपटॉप वितरण और छात्रवृत्ति जैसी योजनाएं शुरू की हैं। स्कूलों में बुनियादी सुविधाएं बढ़ाने पर भी ध्यान दिया जा रहा है। राज्य में चालीस छात्रों पर एक शिक्षक का अनुपात पाने के लिए ही 6,872 स्नातक और 1,590 स्नातकोत्तर शिक्षक रखे जा रहे हैं। इससे सरकारी खजाने पर 181.36 करोड़ और 45.25 करोड़ रुपए का बोझ बढ़ेगा। इसी महीने की शुरूआत में मुख्यमंत्री ने 210 पंचायतों व नगर पालिकाओं द्वारा संचालित माध्यमिक स्कूलों के उच्चतर माध्यमिक स्कूल के रूप में उन्नत करने की घोषणा भी की थी। इसी सिलसिले में स्नातक शिक्षकों के 3,550 नए पद भी सृजित किए जाएंगे। इसी शिक्षा सत्र में कुल 710 स्कूलों का दर्जा बढ़ाया जाना है। इसी पर सरकार 113.38 करोड़ खर्च करेगी।

'शिक्षा के बराबर अवसर' नामक रपट में पाया गया कि अमेरिका में सरकारी स्कूलों के अंतर का छात्रों की उपलब्धि पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। बाहरी परिस्थितियों का शैक्षणिक उपलब्धि पर न्यून प्रभाव पड़ता है और परिवार की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का छात्र की उपलब्धि पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है।

समान शिक्षा का सवाल

❑ डॉ. भरत झुनझुनवाला

यह आम धारणा है कि पब्लिक स्कूलों से पास होने वाले छात्र तेजी से आगे बढ़ते हैं, जबकि हिंदी माध्यम वाले सरकारी स्कूलों के छात्र पीछे रह जाते हैं। इससे समाज में दो वर्गों के बीच खाई बढ़ रही है। ग्रामीण तथा प्रतिभावान बच्चे अपनी क्षमता के अनुकूल पद हासिल नहीं कर पा रहे हैं। इस बढ़ती खाई पर मानव संसाधन मंत्री कपिल सिब्बल ने चिंता जताई है। कई शिक्षाविदों का कहना है कि सभी छात्रों को समान शिक्षा दी जानी चाहिए।

वास्तव में यह विषय आर्थिक असमानता से जुड़ा हुआ है। किसी भी जाति के विकास के लिए एक स्तर की असमानता होना जरूरी है। सब मधुमक्खी में समानता स्थापित कर दी जाए तो कोई भी रानी मधुमक्खी नहीं बन पाएगी और वह प्रजाति ही नष्ट हो जाएगी। अथवा शेर जैसे पशुओं में नेता न बनाया जाए तो वे झुंड नहीं बना सकेंगे और सभी एकल शेरों पर दूसरे पशु वार कर सकेंगे, लेकिन एक स्तर के बाद असमानता हानिप्रद हो जाती है। जैसे शेरों का राजा सारा मांस स्वयं खा जाए और दूसरे शेरों के लिए न छोड़े तो दूसरे शेर मर जाएंगे और कालक्रम में अकेला राजा भी दूसरे पशुओं से मारा जाएगा। इसी प्रकार मनुष्यों में ऊपरी वर्ग सभी संसाधनों पर कब्जा कर ले तो उसके खाने के लिए अन्न उगाने वाले नहीं बचेंगे और वह स्वयं संकट में पड़ जाएगा। इसके विपरीत संसाधनों को सभी मनुष्यों में बराबर बांट दिया जाए तो हर मनुष्य अपने रोटी-कपड़े की व्यवस्था करने में ही थक जाएगा। अत: मानव जाति के विकास के लिए एक विशेष स्तर की आर्थिक असमानता आवश्यक है। यूं समझिए कि समाज पूर्ण बराबरी पर स्थिर है। इसके बाद असमानता बढ़ने पर आर्थिक विकास में गति आती है, परंतु एक सीमा के बाद असमानता बढ़ने से सामाजिक वैमनस्य बढ़ने लगता है और असमानता समाज तथा आर्थिक विकास के लिए हानिप्रद हो जाती है।

शिक्षा व्यवस्था की असमानता आर्थिक असमानता का प्रतिबिंब होती है। मानव जाति को अमुक संख्या के किसान, श्रमिक, व्यापारी, अध्यापक, इंजीनियर, डॉक्टर, नेता आदि की जरूरत है। तदानुसार मनुष्य ने शिक्षा व्यवस्था स्थापित की है। कुछ छात्रों को किसान और दूसरों को इंजीनियर बनाने की व्यवस्था की है।

असमानता के इस पदक्रम में हर छात्र के स्थान का निर्धारण जटिल प्रणाली से किया जाता है। भारतीय परंपरा में इन परिस्थितियों को प्रारब्ध, पुरुषार्थ तथा भाग्य में वर्गीकृत किया गया है। प्रारब्ध हुआ कि एक छात्र के पिता ने उसे पब्लिक स्कूल में पढ़ने के लिए शहर में भेजा। दूसरे छात्र को धन के अभाव में गाय चराने के लिए जंगल में भेज दिया गया। पुरुषार्थ हुआ कि एक छात्र ने गाय चराने के साथ-साथ सायंकाल अध्ययन किया और हाई स्कूल में उत्तीर्ण हुआ। दूसरे छात्र ने पब्लिक

स्कूल में जाते हुए ड्रग्स का सेवन किया। वह फेल हुआ। ऐसे व्यक्तियों से मेरी भेंट हुई है जो हार्वर्ड विश्वविद्यालय में पढ़े हैं, किंतु आज सामान्य लेक्चरर का कार्य कर रहे हैं। तीसरी परिस्थिति भाग्य की है। एक छात्र का जन्म मुंबई के धारावी स्लम में हुआ। उसे भाग्यवश इंग्लिश स्कूल में दाखिला मिल गया। दूसरे छात्र का जन्म दूर गांव में हुआ जहां फिसड्डी सरकारी स्कूल के अलावा कोई दूसरा विद्यालय न था।

शिक्षा प्रणाली का प्रभाव 'भाग्य' तक सीमित है। समान शिक्षा स्थापित हो जाए तो छात्र के भाग्य में परिवर्तन होगा। गरीब का भाग्य सुधरेगा, क्योंकि उसे अच्छी शिक्षा मिलेगी। अमीर का भाग्य टूटेगा, क्योंकि उसे प्राइवेट शिक्षा नहीं मिलेगी, परंतु दोनों के प्रारब्ध और पुरुषार्थ पूर्ववत रहेंगे। स्पष्ट है कि इससे दोनों के बीच असमानता बनी रहेगी। इसके अलावा समान शिक्षा से भाग्य में पूरी समानता स्थापित नहीं होती है। भाग्य के दूसरे हिस्से जैसे रोजगार गारंटी से पिता को पर्याप्त आय हो जाना, अच्छे बैंक मैनेजर द्वारा शिक्षा लोन का स्वीकार किया जाना इत्यादि में अंतर बना रहता है। अत: व्यक्ति के स्थान को तय करने में भाग्य का हिस्सा 33 प्रतिशत मानें और इसमें शिक्षा का हिस्सा आधा मानें तो कुल में 17 प्रतिशत प्रभाव शिक्षा व्यवस्था का पड़ेगा। सामाजिक असमानता बनी रहेगी, क्योंकि 83 प्रतिशत परिस्थितियां असमानता को पोषित करेंगी।

इस आकलन के कई प्रमाण उपलब्ध हैं। समाजशास्त्र के एंसाइक्लोपीडिया में बताया गया है कि शिक्षा की उपलब्धि तय करने में शिक्षा व्यवस्था की भूमिका न्यून रहती है। 'शिक्षा के बराबर अवसर' नामक रपट में पाया गया कि अमेरिका में सरकारी स्कूलों के अंतर का छात्रों की उपलब्धि पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। बाहरी परिस्थितियों का शैक्षणिक उपलब्धि पर न्यून प्रभाव पड़ता है और परिवार की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का छात्र की उपलब्धि पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। आगे बताया गया है कि अमेरिका में 19वीं तथा 20वीं शताब्दी में शिक्षा के विशाल फैलाव का छात्र की सामाजिक असमानता पर न्यून प्रभाव पड़ा है। कई कमजोर वर्गों का शैक्षणिक स्तर अवश्य सुधरा है, परंतु ऊपरी वर्गों के शैक्षणिक स्तर में कहीं ज्यादा सुधार हुआ जिससे असमानता बढ़ी है।

प्रारब्ध और पुरुषार्थ का शैक्षणिक उपलब्धि पर कई प्रकार से प्रभाव पड़ता है। उच्च वर्ग के परिवारों में निवेश करने की प्रवृत्ति अधिक होती है। इसी से वे समृद्ध होते हैं। अत: उनके बच्चे अपने यौवन को शिक्षा में निवेश करने को तत्पर रहते हैं, जबकि कमजोर वर्ग के तमाम लोग बताते हैं कि पिता के कहने के बावजूद उन्होंने शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया था। उच्च वर्ग के लोगों का पारिवारिक माहौल लिखने-पढ़ने के अनुकूल रहता है। घर में अखबार, मैगजीन आदि उपलब्ध रहती हैं। माता-पिता कहानियां पढ़ कर सुनाते हैं। कमजोर वर्ग के परिवारों में अशांति, हिंसा का माहौल अधिक रहता है। इन अलग-अलग प्रारब्ध और पुरुषार्थ के छात्रों को शिक्षा का समान भाग्य मिल जाए तो भी शैक्षिक उपलब्धता में भारी अंतर बना रहता है।

हम कुछ भी करें सामाजिक और आर्थिक असमानता बढ़ेगी, क्योंकि यह मानव जाति के विकास के लिए जरूरी है। तदानुसार शैक्षिक असमानता भी बढ़ेगी ही। यदि शैक्षिक समानता स्थापित की गई तो भी शैक्षिक उपलब्धि में अंतर बना रहेगा, क्योंकि प्रारब्ध और पुरुषार्थ प्रभावी रहते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के निजीकरण को स्वीकार करना चाहिए। सामाजिक असमानता की यह छाया मात्र है। छाया को मारने से व्यक्ति नहीं मरता। इसी तरह से प्राइवेट शिक्षा को मारने से असमानता नहीं मरेगी। विषय बचता है कमजोर वर्ग के प्रखर छात्रों का। इन्हें आगे बढ़ने के लिए अवसर अवश्य उपलब्ध होने चाहिए। अत: शिक्षा के निजीकरण के साथ-साथ कमजोर वर्गों के प्रखर छात्रों के प्रवेश के लिए पर्याप्त खिड़की-दरवाजे खोले जाएं। ❑

(लेखक आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ हैं)

देश बांटने की साजिश रच रही कांग्रेस

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राष्ट्रीय कार्यकारिणी सदस्य राममाधव कांग्रेस नीत संप्रग सरकार पर जमकर बरसे। उन्होंने कहा कि सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा अधिनियम देश को बांटने वाला कानून है, जिसे वोट बैंक और चुनाव को ध्यान में रखकर लाया गया है। इससे सामाजिक सद्‌भाव बनने के बजाय और बिगड़ेगा। अल्पसंख्यक कानून से नहीं, बहुसंख्यकों के दिल में जगह बनाकर सुरक्षित रह सकेंगे। उन्होंने इस बांटने वाले कानून के खिलाफ समाज से एकजुट होने का आह्वान करते हुए चेतावनी दी कि इसे किसी कीमत पर बर्दाश्त नहीं किया जायेगा।

राममाधव बीआरए बिहार विवि के सीनेट हॉल में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की ओर से 'सांप्रदायिक और लक्षित हिंसा अधिनियम 2011 : सामाजिक सद्‌भाव के लिए खतरा' विषयक संगोष्ठी में बोल रहे थे। उन्होंने अधिनियम की धारा 13, 14, 15 का जिक्र करते हुए कहा कि सामाजिक एकता के लिए यह इतना घातक है कि हिंसा कोई भी करे जिम्मेदार बहुसंख्यक होगा। ऐसे में डर से बहुसंख्यक और अल्पसंख्यकों के बीच बातचीत तक बंद हो जायेगी। इससवे मुसलमानों को भी सचेत रहने की जरूरत है। अन्यथा, सच्चर कमेटी का जो हश्र हुआ यही इसका भी होगा। उन्होंने कहा कि केन्द्र सरकार को आजादी बाद से हुई साम्प्रदायिक हिंसा पर स्वेत पत्र जारी करना चाहिए। इस मौके पर मुख्य अतिथि उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायमूर्ति राजेन्द्र प्रसाद, राजेन्द्र कृषि विवि, पूसा के पूर्व कुलपति डॉ. गोपाल त्रिवेदी सहित अन्य ने अपने विचार रखे।

विज्ञान में क्यों पिछड़ रहा है भारत

❑ **निरंकार सिंह**

वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की संख्या की दृष्टि से भारत दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा देश है, लेकिन विज्ञान और तकनीक के मामले में वह काफी पिछड़ा है। खुद प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने विज्ञान कांग्रेस के ९९वें अधिवेशन में भारत के चीन से पिछड़ने पर चिंता जाहिर की है। वह वैज्ञानिक अनुसंधान पर खर्च एक फीसदी से बढ़ाकर दो फीसदी करना चाहते हैं, लेकिन खर्च बढ़ा देने से ही देश में विज्ञान का विकास नहीं हो जाएगा। इसके लिए देश में वैज्ञानिक शोध और आविष्कार का माहौल बनाना होगा। हमारे तमाम वैज्ञानिक विदेश चले जाते हैं। पिछली विज्ञान कांग्रेस के अधिवेशन में उन्होंने विदेशों में काम कर रहे भारतीय वैज्ञानिकों से देश लौटने की भी अपील की थी, पर वे नहीं लौटे। हमारे वैज्ञानिक विदेश जाते ही क्यों हैं? इसका जवाब दो साल पहले रसायन में संयुक्त रूप से नोबल पुरस्कार प्राप्त करने वाले भारतीय मूल के वैज्ञानिक वेंकट रमन रामकृष्णन ने दिया था। उन्होंने कहा था कि भारतीय वैज्ञानिकों को लालफीताशाही से मुक्ति तथा और अधिक स्वायत्तता की जरूरत है। देश के वैज्ञानिक संस्थान और राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं जब तक नौकरशाही के चंगुल से ग्रस्त रहेंगी, तब तक भारत में नए विज्ञान और तकनीक के विकास का रास्ता नहीं खुल सकता है। देश में वैज्ञानिक खोज और आविष्कार के लिए उपयुक्त माहौल बनाना सरकार और खासकर प्रधानमंत्री का ही काम है कि वह देखें कि उनके वैज्ञानिक संस्थानों और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में हो क्या रहा है। आविष्कार में हम फिसड्डी अंतरिक्ष, परमाणु मिसाइल के क्षेत्र में हमारी कुछ उपलब्धियां भी हैं, लेकिन दुनिया को बताने लायक हमने कोई नई खोज और आविष्कार नहीं किया है। वैज्ञानिकों-इंजीनियरों की संख्या के हिसाब से भारत का दुनिया में तीसरा स्थान है, लेकिन सारा का सारा वैज्ञानिक साहित्य पश्चिमी देश के वैज्ञानिकों के कार्यों से भरा पड़ा है। उसमें किसी भारतीय का नाम नहीं मिलता है। अपने देश में आज कोई रमन, खुराना क्यों नहीं है? इतने सारे वैज्ञानिक संस्थानों में लगे हुए ढेरों वैज्ञानिक किस ऊहापोह में हैं। वे कुछ करते हैं, उसे मान्यता नहीं मिलती या वे कुछ कर ही नहीं रहे हैं? क्या हमारे देश में वैज्ञानिक प्रगति के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं है? दरअसल, सात-आठ दशक पहले ऐसा नहीं था।

ब्रिटिश शासन काल में तकलीफें कम नहीं थीं। परिस्थितियां एकदम प्रतिकूल थीं। इसके बावजूद भारत ने रामानुजम, जगदीश चंद्र बोस, चंद्र शेखर वेंकट रामन, मेघनाद साहा, सत्येंद्र नाथ बोस जैसे वैज्ञानिक पैदा किए। इन वैज्ञानिकों ने भारत में ही काम किया और दुनिया में भारत का गौरव बढ़ाया था। लेकिन आजादी के बाद हम एक भी अंतरराष्ट्रीय स्तर का वैज्ञानिक देश में पैदा नहीं कर सके? इस बारे में क्या कभी हमने सोचा है? दुनिया में अब वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान आर्थिक स्रोत के उपकरण बन गए हैं। किसी भी देश की वैज्ञानिक और तकनीकी क्षमता उसकी आर्थिक प्रगति का पैमाना बन चुकी है। तकनीकी ज्ञान अब व्यापार के हथियार बन चुके हैं। इसलिए विज्ञान और तकनीक के विकास के बिना अब किसी देश की प्रगति नहीं हो सकती है। अब सवाल यह है कि क्या हमारी आधुनिक सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक प्रणाली में कोई ऐसी खामी है, जो भारतीय भूमि पर विज्ञान

ब्रिटिश शासन काल में तकलीफें कम नहीं थीं। परिस्थितियां एकदम प्रतिकूल थीं। इसके बावजूद भारत ने रामानुजम, जगदीश चंद्र बोस, चंद्र शेखर वेंकट रामन, मेघनाद साहा, सत्येंद्र नाथ बोस जैसे वैज्ञानिक पैदा किए। इन वैज्ञानिकों ने भारत में ही काम किया और दुनिया में भारत का गौरव बढ़ाया था। लेकिन आजादी के बाद हम एक भी अंतरराष्ट्रीय स्तर का वैज्ञानिक देश में पैदा नहीं कर सके? इस बारे में क्या कभी हमने सोचा है?

और तकनीक को पल्लवित नहीं होने देती? वास्तव में समाज ही वह ताकत है, जो यह निश्चित कर सकती है कि विज्ञान और तकनीक को किस दिशा में आगे बढ़ना है। आखिरकार विकास की प्रक्रिया समाज में ही तो शुरू होती है और जब एक बार विकास शुरू हो जाता है तो समाज भी बदलने लगता है तो फिर क्यों न हम अन्य देशों के साथ भारत की तुलना करके देखें कि विकास आखिर किस दिशा में हुआ है।

पश्चिमी देश क्यों हैं आगे?

अगर ध्यान से देखा जाए तो पश्चिमी देशों की परिस्थितियां इतनी अनुकूल थीं कि वैज्ञानिक विकास जरूरी हो गया था। आजादी की खुशहाली के आलम में लोग साहसिक यात्राओं पर निकलने लगे। उनका संपर्क दुनिया में कुछ नया खोजने वाले कारीगरों से हुआ। धीरे-धीरे पुराने विश्वास, आदतें और सामाजिक मूल्य बदलने लगे। विकास की एक नई प्रक्रिया शुरू हो गई। उत्पादन के तौर-तरीकों और परिवहन के साधनों में सुधार की मांग तेजी से बढ़ती जा रही थी। उस समय युद्ध भी हो रहे थे। युद्ध में विजय के लिए जरूरी था नए से नए साधनों का उपयोग। अत्याधुनिक चीजें हासिल करने का जोर उमड़ पड़ा और खोजबीन तेजी से होने लगी। किसी भी दूसरे देश ने वैज्ञानिक विकास के लिए ऐसी जमीन नहीं दी, जैसी यूरोप और अमेरिका ने। इस नई वैज्ञानिक संस्कृति के लाभ साफ दिखाई दे रहे थे। यही वजह है कि कुछ और देशों ने इसे अपना लिया। इसे सबसे पहले जापानियों ने अपनाया। जापान ने यह जानने की कोशिश की कि आखिर पश्चिम में वैज्ञानिक क्रांति कैसे संभव हुई। यह पता लगाने के बाद उसी आधार पर सरकार ने देश के पूरे सहयोग से अनुकूल परिस्थितियों के निर्माण की दिशा में कदम उठाए। उसने यह महसूस किया कि पश्चिम देशों की सैन्य शक्ति, पश्चिमी शिक्षा और पश्चिमी उद्योग तकनीक पर आधारित थे।

पिछले 50 साल में चीन ने जो कुछ कर दिखाया, उससे लगता है कि ऐसा कुछ नहीं है, जो संभव न हो। लेकिन अंग्रेजों के जाने के बाद हमने क्या विज्ञान को वैज्ञानिक रूप में विकसित किया है? आज देश के 900 से अधिक वैज्ञानिक संस्थानों, विश्वविद्यालयों में विज्ञान और तकनीक के अनुसंधान का काम होता है, लेकिन फिर भी दुनिया के विज्ञान साहित्य में हमारा नामोनिशान नहीं है और तकनीक के लिए हम दूसरे देशों पर निर्भर हैं।

इसलिए उन्होंने जापानी इतिहास तथा हालात द्वारा अपेक्षित सुधार करके उन बातों को अपनाया। जापान ने विज्ञान को राजनीतिक आवश्यकताओं के अनुसार ढालने में असाधारण सूझ-बूझ दिखाई। जापान की ही तरह सोवियत संघ और अब रूस ने भी विज्ञान शासन और उद्योग की एकात्मता को आधार बनाया। उसने भी वैज्ञानिक शिक्षा के लिए जापान की तरह अपनी मातृ भाषा को आधार बनाया। नौकरशाही और लाल फीताशाही को खत्म करने के लिए नए-नए तौर-तरीके अपनाए। जापान और रूस के अनुभवों का चीन को बड़ा फायदा हुआ। चीनी इस बात में भी विश्वास करते हैं कि नई आधुनिक तकनीकों को जितनी जल्दी हो सके, अपना लेना चाहिए। लेकिन इसके साथ ही जब तक नई तकनीक न अपना ली जाए, तब तक पुरानी तकनीक को प्रोत्साहन देते रहना चाहिए ताकि अधिक से अधिक लोग काम कर सकें। आकार और आबादी के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टि से भी चीन और भारत के बीच कई चीजें एक जैसी रहीं हैं, लेकिन पचास साल पहले तक हमारे इस पड़ोसी देश में ऐसा कुछ नहीं था, जिसे देखकर हमारे देश के लोगों को ईर्ष्या हो।

इन पांच दशकों में चीन ने अपने सामानों के उत्पादन की लागत गुणवत्ता में इतना सुधार किया कि अमेरिका और जापान जैसी महाशक्तियां भी पशोपेश में पड़ गई। भारत के लिए उन नीतियों पर नजर डालना फायदेमंद हो सकता है, जिन्होंने चीन के आर्थिक चमत्कार को संभव बनाया है। आबादी नियंत्रण, शिक्षा प्रसार, आधारभूत विकास के साथ-साथ आर्थिक और प्रशासनिक सुधार ही चीन के विकास का माध्यम बने हैं। पिछले 50 साल में चीन ने जो कुछ कर दिखाया, उससे लगता है कि ऐसा कुछ नहीं है, जो संभव न हो। लेकिन अंग्रेजों के जाने के बाद हमने क्या विज्ञान को वैज्ञानिक रूप में विकसित किया है? आज देश के 900 से अधिक वैज्ञानिक संस्थानों, विश्वविद्यालयों में विज्ञान और तकनीक के अनुसंधान का काम होता है, लेकिन फिर भी दुनिया के विज्ञान साहित्य में हमारा नामोनिशान नहीं है और तकनीक के लिए हम दूसरे देशों पर निर्भर हैं। हमने पंचवर्षीय योजनाओं का खाका रूस से उधार लिया, लेकिन उनके अनुभवों से कुछ सीखने कोशिश नहीं की। हमारे पास प्राकृतिक संसाधनों, खनिजों का विशाल भंडार है। दुनिया की सबसे अधिक उपजाऊ कृषि भूमि हमारे पास है। अंतरिक्ष उपग्रहों और मिसाइलों के निर्माण में हमारे वैज्ञानिकों की क्षमता जगजाहिर हो चुकी है। जरूरत इस बात की है कि सबसे पहले हम अपने देश की प्राथमिकताएं तय करें और उसके अनुसार अपनी नीतियां बनाएं। फिर पूरे संकल्प के साथ उसके अमल में जुट जाएं। यदि हमारे देश के राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों की इस देश की जरा भी चिंता है तो यह कार्य उन्हें तुरंत शुरू कर देना चाहिए। कोई भी देश अंततोगत्वा अपनी आंतरिक शक्ति और वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षमता से ही आत्मनिर्भर होता है। ❑

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

❑ रमेश दुबे

पिछड़ता भारतीय विज्ञान

एक दशक पहले तक अंतरराष्ट्रीय विज्ञान पत्रिकाओं में भारतीय वैज्ञानिकों के लेखों की संख्या 11,000 हुआ करती थी, जबकि चीनी वैज्ञानिकों के सिर्फ 10,000 लेख होते थे। लेकिन ताजा आंकड़े पूरी तरह अलग कहानी बयां करते हैं। 2010 में भारतीय वैज्ञानिकों के 19,000 लेख छपे, वहीं चीनी वैज्ञानिकों के लेखों की संख्या 50,000 को पार कर गई। कम खर्च के साथ-साथ विज्ञान व शोध-विकास में पिछड़ने का एक कारण यह भी है कि इन क्षेत्रों में आकर्षक कॅरियर का घोर अभाव है।

भुवनेश्वर में आयोजित भारतीय विज्ञान कांग्रेस को संबोधित करते हुए भारत के प्रधानमंत्री ने कहा कि पिछले कुछ दशकों में विज्ञान के क्षेत्र में भारत की स्थिति में गिरावट आई है और चीन जैसे देशों ने हमें पीछे छोड़ दिया है। इसी प्रकार 2010 में 97वीं विज्ञान कांग्रेस को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा था कि विज्ञान और देशी शोध व विकास को आगे बढ़ाने में निजी क्षेत्र की भूमिका निराशाजनक है। देखा जाए तो विज्ञान के पिछड़ेपन और निजी क्षेत्र की कंजूसी में गहरा संबंध है। विज्ञान के क्षेत्र में जिस चीन से पिछड़ने की बात प्रधानमंत्री ने की है, वहां शोध और विकास (Randi) पर होने वाले कुल खर्च का 65 फीसदी निजी क्षेत्र द्वारा किया जाता है, जबकि भारत में यह अनुपात 25 फीसदी ही है। कुल खर्च में भी भारत चीन से बहुत पीछे है। उदाहरण के लिए 2011 के दौरान चीन ने शोध और विकास पर 153.7 अरब डॉलर की भारी-भरकम राशि खर्च की। वहीं भारत का खर्च महज 36 अरब डॉलर रहा। जीडीपी में हिस्सेदारी को देखें तो जहां चीन अपनी जीडीपी का 1.4 फीसदी शोध और विकास पर खर्च करता हैं, वहीं भारत 0.9 फीसदी। कुछ साल पहले एडमिनिस्ट्रेटिव स्टाफ कॉलेज ऑफ इंडिया द्वारा किए गए अध्ययन में पता चला था कि 80 फीसदी से ज्यादा भारतीय कंपनियां आरएंडडी पर कोई खर्च नहीं करती हैं।

आज जब अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में निजी क्षेत्र की भूमिका बढ़ती जा रही है, उस दौर में शोध एवं विकास में निजी क्षेत्र की कंजूसी देश को पीछे धकेल रही है। उदाहरण के लिए एक दशक पहले तक अंतरराष्ट्रीय विज्ञान पत्रिकाओं में भारतीय वैज्ञानिकों के लेखों की संख्या 11,000 हुआ करती थी, जबकि चीनी वैज्ञानिकों के सिर्फ 10,000 लेख होते थे। लेकिन ताजा आंकड़े पूरी तरह अलग कहानी बयां करते हैं। 2010 में भारतीय वैज्ञानिकों के 19,000 लेख छपे, वहीं चीनी वैज्ञानिकों के लेखों की संख्या 50,000 को पार कर गई। कम खर्च के साथ-साथ विज्ञान व शोध-विकास में पिछड़ने का एक कारण यह भी है कि इन क्षेत्रों में आकर्षक कॅरियर का घोर अभाव है। उदाहरण के लिए देश में विज्ञान में पीएचडी करने वाली दो हजार महिलाओं में से 60 फीसदी बेरोजगार हैं। इसीलिए 12वीं के बाद विज्ञान के प्रतिभाशाली छात्र-छात्राएं भौतिकी, रसायन और जीव विज्ञान के बजाय तकनीकी व प्रबंधन से जुड़े पाठ्यक्रमों को प्राथमिकता देने लगे हैं। इन क्षेत्रों में भारी-भरकम पैकेज के साथ-साथ सामाजिक प्रतिष्ठा भी हासिल हो जाती है। इसी का परिणाम है कि विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के विज्ञान संकाय के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में छात्रों के दाखिले में 80 फीसदी तक की कमी आई है। विज्ञान और शोध-विकास क्षेत्र से प्रतिभाओं के पलायन का दुष्परिणाम शोध क्षेत्र में दिखाई देने लगा है।

फिक्की की एक रिपोर्ट के मुताबिक अमेरिका में हर वर्ष भारत से दस गुना, चीन में सात गुना और ब्राजील में तीन गुना ज्यादा शोध पत्र प्रकाशित होते हैं। गौरतलब है कि शोध पत्र प्रकाशन में वैश्विक स्तर पर हमारी हिस्सेदारी महज 2.11 फीसदी है। पीएचडी के मामले में भी हमारा देश इन देशों की तुलना में पिछड़ता जा रहा है। दरअसल, विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में पीएचडी करने वाले छात्रों की संख्या लगातार घट रही है। स्थिाति यहां तक आ गई है कि प्राध्यापकों और अनुसंधानकर्ताओं को अपनी परियोजनाओं के लिए प्रोजेक्ट फेलो नहीं मिल रहे हैं, जिससे उनका कार्य प्रभावित हो रहा है। वैज्ञानिकों की कमी के कारण डीआरडीओ को उत्कृष्टता केंद्र स्थापित करने वाले कई प्रस्तावों को रोकना पड़ा है। अच्छे वैज्ञानिकों की कमी का एक कारण प्राध्यापकों की कमी भी है। प्राध्यापकों की कमी के लिए वे सरकारी नीतियां जिम्मेदार हैं, जो वेतन और रिसर्च फंडिंग के मामले में हर किसी के साथ एक जैसा व्यवहार करती हैं। दूसरी ओर चीन में स्टार सिस्टम लागू है, जिसके तहत अग्रणी शिक्षाविदों को ऊंची तनख्वाह व रिसर्च फंडिंग मिलती है।

हालांकि अब भारत ने भी विज्ञान का चेहरा बदलने की योजना बनाई है। इसके तहत निजी क्षेत्र के सहयोग से 12वीं पंचवर्षीय योजना के आखिर तक शोध और विकास पर खर्च दो गुना किया जाएगा, लेकिन निजी क्षेत्र की मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति और विज्ञान के प्रति नकारात्मक माहौल को देखें तो यह योजना शायद ही कामयाब हो। दरअसल, विज्ञान की शिक्षा व शोध-विकास का तभी कायाकल्प होगा, जब सरकार इस क्षेत्र में सुधारों को लागू करे और एक कॅरियर के रूप में इसे आकर्षक बनाए। ❑

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

उच्च शिक्षा का निम्न स्तर

❑ हर्ष वी. पंत

भारत को उभरती वैश्विक शक्ति के रूप में देखा जा रहा है, ऐसी शक्ति जो 21वीं सदी में सत्ता संतुलन को आकार देगी। हालांकि भारत को अपने आर्थिक विकास को गति प्रदान करने में अनेक बाधाओं को दूर करना है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण है भारत की उच्च शिक्षा का संकट। भारत में उच्च शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए सरकार ने दर्जन भर तथाकथित नए विश्व स्तरीय विश्वविद्यालय खोलने का प्रस्ताव रखा है। इसके अलावा 16 नए केंद्रीय विश्वविद्यालय खोलने की योजना भी बनाई है। इनकी रूपरेखा यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन ने तैयार की है। उम्मीद है, संसद के अगले सत्र में सरकार इस संबंध में विधेयक पेश कर देगी। इन विश्वस्तरीय विश्वविद्यालयों में समान प्रवेश परीक्षा होगी, जिनमें अधिकतम 12,000 छात्र प्रवेश पा सकेंगे। इनमें हर तीन साल में पाठ्यक्रम में बदलाव किया जाएगा, सेमेस्टर सिस्टम लागू होगा और निजी क्षेत्र की भागीदारी होगी।

आगामी 11वीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा को केंद्र में रखा गया है। इसे भारत की शिक्षा योजना कहा गया है। शिक्षा के लिए दसवीं पंचवर्षीय योजना में 7.7 फीसदी प्रावधान की तुलना में 11वीं योजना में 19 फीसदी प्रावधान किया गया है। उच्च स्तरीय सलाहकार इकाई नेशनल नॉलिज कमीशन ने भी रेखांकित किया है कि भारत की उच्च शिक्षा में आमूलचूल बदलाव की आवश्यकता है। 21वीं सदी में शक्ति के वैश्विक वितरण में ज्ञान, अहम भूमिका निभाएगा। उच्च प्रौद्योगिकी उद्योगों के बल पर भारत पहले ही आर्थिक सफलता के पथ पर आगे बढ़ रहा है। किंतु वर्तमान में भारत की उच्च शिक्षा की दारुण अवस्था को देखते हुए विकास की वर्तमान गति बरकरार रहने में संदेह है। भारत का निकटतम प्रतिस्पर्द्धी चीन भविष्य की चुनौतियों से निपटने के लिए उच्च शिक्षा में निवेश बढ़ा रहा है, जबकि भारत आंखें मूंदे बैठा है मानो भारतीय विश्वविद्यालयों में विश्वस्तरीय शोध का अभाव कोई ऐसी समस्या है जो खुद-ब-खुद ही हल हो जाएगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि आइआइटी और आइआइएम के माध्यम से भारत से सुप्रशिक्षित इंजीनियर और प्रबंधक निकल रहे हैं किंतु इनकी संख्या पर्याप्त नहीं है। यह भी गंभीर चिंता का विषय है कि निजी शिक्षण संस्थान इंजीनियरों और प्रबंधकों की बढ़ती मांग की पूर्ति तो कर रहे हैं किंतु इनके उत्पाद उस गुणवत्ता के नहीं हैं जिनके बल पर भारत वैश्विक बाजार में प्रतिस्पर्द्धा कर सके।

भारत का उच्च शिक्षा तंत्र विश्व में

अगर उच्च शिक्षा का मुख्य ध्येय छात्रों की तार्किक सोच को बढ़ावा देना, उनके बौद्धिक फलक का विस्तार करना और सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करना है तो बड़े अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि भारत की उच्च शिक्षा पूरी तरह विफल रही है। यह स्पष्ट नहीं है कि सरकार राष्ट्र के उच्च शिक्षण तंत्र की सड़न दूर करने के लिए इसमें आमूलचूल परिवर्तन करना चाहती है या नहीं।

तीसरे स्थान पर आता है। इससे आगे अमेरिका और चीन हैं। भारत में प्रतिवर्ष करीब 25 लाख स्नातक निकलते हैं, जो भारत के संबंधित युवा वर्ग का महज 10 फीसदी है। यही नहीं, इनकी योग्यता भी मानकों से बहुत नीचे है। अगर हम आइआइटी, आइआइएम और कुछ अन्य गिने-चुने संस्थानों को छोड़ दें, तो पाते हैं कि उच्च शिक्षा का स्तर उभरते हुए भारत की आकांक्षाओं की पूर्ति करने में समर्थ नहीं है। भारतीय विश्वविद्यालय जिन्हें विश्वस्तरीय शोध और बौद्धिक गतिविधियों का केंद्र होना चाहिए था, छल-कपट के अड्डे बने हुए हैं। वर्षों से उच्च शिक्षा में निम्न निवेश करने और प्रदर्शन पर ध्यान न देकर तमाम विश्वविद्यालयों के साथ समान व्यवहार करने के कारण ऐसा माहौल बन गया है कि शिक्षाविदों को बेहतर शोधपरक शिक्षा के लिए जरूरी संसाधन और प्रोत्साहन नहीं मिल पा रहे हैं। आधुनिक ज्ञान आधारित वैश्विक अर्थव्यवस्था में अपनी पूर्ण क्षमता का दोहन करने के लिए भारत को विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा का संकट संभवत: किसी भी लोकतांत्रिक देश का सबसे गहन संकट होता है। यह संकट भारत के भविष्य को सीधे-सीधे प्रभावित करेगा। भारत में उच्च शिक्षा के निजीकरण की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। यह शिक्षा सुधार के समग्र कार्यक्रम का नतीजा न होकर सार्वजनिक क्षेत्र के ध्वस्त होने का दुष्परिणाम है।

यह ढर्रा परेशान करने वाला है। यह आशा की जा रही है कि भारत इस पहलू पर ध्यान देगा और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अधिक धनराशि डालेगा। केवल विश्वविद्यालयों की संख्या बढ़ाने भर से शिक्षा के क्षेत्र में समस्याओं को दूर नहीं किया जा सकता। विश्वस्तरीय विश्वविद्यालयों की स्थापना करने की रूपरेखा बनाना पहला जरूरी कदम जरूर है, किंतु इससे समस्याओं का खुद-ब-खुद समाधान नहीं हो जाएगा। संख्या पर जोर देना भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था की गिरती गुणवत्ता रोकने का सही उपाय नहीं है। नीति निर्माता समस्या की जड़ तक नहीं पहुंच रहे हैं। भारत में उच्च शिक्षा के विकास में ऐसे संस्थान अहम भूमिका निभा सकते हैं जो शोधपरक शिक्षा पर जोर देते हों। उच्च शिक्षा को मात्र आर्थिक औजार के तौर पर विकसित नहीं किया जा सकता, जिसका प्रमुख ध्येय नियोक्ता की आवश्यकता पूरी करने के लिए छात्रों को व्यावहारिक कुशलता से लैस करना हो। न ही हमारी उच्च शिक्षा का उद्देश्य ऐसे इंजीनियर और वैज्ञानिक पैदा करना होना चाहिए जो चीन से टक्कर ले सकें। जीवन के वृहत्तर मामलों पर गहन शोध के बजाय महज नौकरी के कुछ नुक्ते सिखाना भर दीर्घकाल में घातक सिद्ध हो सकता है। भारत को विकास के लिए ज्ञानार्जन के साथ-साथ उच्च शिक्षा के महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। अगर उच्च शिक्षा का मुख्य ध्येय छात्रों की तार्किक सोच को बढ़ावा देना, उनके बौद्धिक फलक का विस्तार करना और सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करना है तो बड़े अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि भारत की उच्च शिक्षा पूरी तरह विफल रही है। यह स्पष्ट नहीं है कि सरकार राष्ट्र के उच्च शिक्षण तंत्र की सड़न दूर करने के लिए इसमें आमूलचूल परिवर्तन करना चाहती है या नहीं। ❑

(लेखक लंदन के किंग्स कॉलेज में प्राध्यापक हैं)

शिक्षा से ही राष्ट्रीय तरक्की व खुशहाली

राजस्थान शिक्षक संघ राष्ट्रीय शाखा सिरोही ने कर्तव्य बोध कार्यक्रम का आयोजन 22 जनवरी 2012 को आदर्श विद्या मंदिर रामझरोखा में किया। कार्यक्रम की शुरुआत भारत माता, विवेकानन्द, सुभाषचन्द्र बोस के समक्ष माल्यार्पण, दीप प्रज्ज्वलन कर की। मुख्य अतिथि रामलाल रावल ने वेद, गीता, रामायण के दृष्टांतों से कर्तव्य की व्याख्या दी। मुख्य वक्ता गोपालसिंह राव ने राष्ट्रीयता की भावनायुक्त शिक्षा को देश की सर्वोच्च प्राथमिकता बताया। उन्होंने कहा कि संस्कारयुक्त शिक्षा से ही राष्ट्र की तरक्की व खुशहाली होगी। अध्यक्ष छगनलाल माली ने अपने सामाजिक सरोकार में सक्रिय सहभागिता की अपील की। अशिक्षा एक सामाजिक बुराई है उसे पाटना ही हमारा ध्येय है। आदर्श विद्यामंदिर के प्रधानाचार्य भंवरसिंह परिहार ने भारतीय संस्कृति, साहित्य, भाषा में गुणवत्तायुक्त शिक्षा पर प्रकाश डाला। मार्गदर्शक मनोहरसिंह उदावत ने विवेकानन्द, सुभाषचन्द्र बोस की जीवनी से संबंधित प्रेरक प्रसंगों के माध्यम से कर्तव्य का बोध कराया। कार्यक्रम के प्रारम्भ में अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्रम में कानाराम कुम्हार, चंदनसिंह देवड़ा, उपशाखा अध्यक्ष नथाराम परमार आदि ने विचार व्यक्त किए। अंत में उपशाखा मंत्री खुशवंत खत्री ने सभी का आभार जताया।

विराटनगर में कर्तव्यबोध कार्यक्रम सम्पन्न

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) उपशाखा-विराटनगर का कर्तव्य बोध कार्यक्रम रा.उ.मा.वि. भाबरू में फूलचन्द भिण्डा विधायक, विराटनगर के मुख्य आतिथ्य में मनाया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री मूलचन्द मीणा प्रधानाचार्य ने की।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि फूलचन्द भिण्डा ने शिक्षकों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हमें बालकों को संस्कारित और राष्ट्रप्रेम की शिक्षा देनी चाहिए। मुख्य वक्ता प्रदेशाध्यक्ष प्रहलाद शर्मा ने कहा कि शिक्षकों को अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए समाज एवं राष्ट्र के लिए भी हमेशा हर कार्य के लिए समर्पित होना चाहिए। कार्यक्रम को नवीन शर्मा, बालकृष्ण भारद्वाज, सरपंच पूरणमल जाट आदि ने भी सम्बोधित किया। कार्यक्रम के अन्त में अध्यक्षता कर रहे प्रधानाचार्य ने कहा कि शिक्षकों को हमेशा स्वाध्याय करना चाहिए और इस प्रकार के कार्यक्रम करते रहना चाहिए। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रगान के साथ किया गया।

क्यों पिछड़ रहा है भारतीय विज्ञान

❑ डॉ. ए. के. अरूण

भारत में युवाओं का रुझान विज्ञान की बजाय वाणिज्य विषयों में ज्यादा है। लगभग सभी महत्वपूर्ण विश्वविद्यालयों में युवाओं की पहली पसंद वाणिज्य एवं एकाउंट्स के विषय हैं। सवाल यह है कि 21वीं सदी विज्ञान की सदी होते हुए भी भारतीय युवाओं को ज्यादा संख्या में विज्ञान की तरफ क्यों नहीं आकर्षित कर पा रही है?

भारतीय विज्ञान कांग्रेस के 99वें अधिवेशन में हमारे प्रधानमंत्री ने माना था कि विज्ञान शिक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव की जरूरत है। बेहतर कॅरियर के अभाव में भारतीय विद्यार्थी विज्ञान विषयों में ज्यादा रुचि नहीं ले रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2003 में विश्व में शोध पत्र प्रकाशित करने में भारत का स्थान 15वां था। 2010 में यह स्तर बढ़कर 9वां हो गया। फिर भी पड़ोसी देश की तुलना में भारत का विज्ञान शोध और अध्ययन पिछड़ा ही है। प्रधानमंत्री को भले ही इसकी वजह आकर्षक कॅरियर और धन का अभाव लगती हो। असली वजह तो विज्ञान शिक्षा और शोध की मौजूदा औपनिवेशिक नीतियां हैं जो विज्ञान को खासकर भारतीय संदर्भ में आगे नहीं बढ़ने दे रही हैं। एक तथ्य और है कि कुल 2000 महिला पीएचडी डिग्रीधारी वैज्ञानिकों में 60 फीसदी तो बेरोजगार हैं। पुरुषों के मुकाबले महिला स्नातकोत्तर एवं उच्च अध्ययन युक्त वैज्ञानिकों को अपने पुरुष साथी की तुलना में उपेक्षा झेलनी पड़ती है।

भारत में विज्ञान शिक्षा और शोध का अतीत बेहद गौरवशाली रहा है। विज्ञान में भी खासकर आयुर्विज्ञान तो विकास की दृष्टि से श्रेष्ठता के शिखर पर था। उदाहरण के लिए आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का उद्गम माना जाने वाला हिपोक्रेटिक कार्पस नामक ग्रंथ से भी तीन गुना बड़ा भारतीय चरक संहिता आज भी आयुर्विज्ञान का श्रेष्ठ प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। प्राचीन भारतीय विज्ञान जैसे खगोलशास्त्र, ज्यामिति, भौतिकशास्त्र, गणित, आकाश विज्ञान, समुद्र विज्ञान आदि बेहद विकसित थे। इस संदर्भ में अनेक प्रमाणिक तथ्य सुंदरलाल की पुस्तक 'भारत में अंग्रेजी राज', देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय की पुस्तक 'प्राचीन भारत में विज्ञान और समाज' तथा प्रो. धर्मपाल की पुस्तक 'साइंस एंड टेक्नोलॉजी इन एटीन सेंचूरी' आदि में उपलब्ध हैं। प्राचीन भारतीय विज्ञान की यह विशेषता है कि इसमें तर्क और आलोचना की पूरी गुंजाइश थी और इसी के बल पर भारतीय ज्ञान परंपरा समृद्ध होती थी। यह उस दौर में पश्चिमी विज्ञान व उसकी अवधारणाओं से न केवल तर्क करती बल्कि यथासंभव आपत्ति भी उठाती थी।

प्राचीन भारतीय विज्ञान परंपरा में आलोचना और प्रति-विचारधारा की खास प्रतिष्ठा थी लेकिन आज विज्ञान पर पश्चिमी कॉरपोरेट एवं व्यापार जगत का दबदबा है। आज हमारे योजनाकार जिस विज्ञान शिक्षण की बात कर रहे हैं वह विशुद्ध कॉरपोरेटी एवं पश्चिमी या सीधे कहें तो अमरीकापरस्त है। भारत में विज्ञान शिक्षण और शोध को बढ़ाया जाना नितांत जरूरी है लेकिन यह भी जरूरी है कि भारतीय विज्ञान की गौरवशाली प्राचीन परंपराओं को ध्यान में रखा जाए। देसी विज्ञान के मॉडल के रूप में भारत में

प्रधानमंत्री को भले ही इसकी वजह आकर्षक कॅरियर और धन का अभाव लगती हो। असली वजह तो विज्ञान शिक्षा और शोध की मौजूदा औपनिवेशिक नीतियां हैं जो विज्ञान को खासकर भारतीय संदर्भ में आगे नहीं बढ़ने दे रही हैं।

यत्र-तत्र छोटे मोटे प्रयोग हो रहे हैं। उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश में होशंगाबाद साइंस टीचिंग प्रोग्राम के तहत स्कूली बच्चों में विज्ञान के प्रति रुचि जगाने के लिए अच्छा काम हो रहा है। 1972 से शुरू इस विज्ञान शिक्षण अभियान में प्रदेश के 16 जिले के एक हजार से ज्यादा स्कूलों ने रुचि दिखाई है। इसमें अवलोकन, अभिलेखन, नए प्रयोग, नए सिद्धांतों के आविष्कार आदि पर बल दिया जाता है। तथाकथित आधुनिकता की यह विडंबना है कि वह विज्ञान से ज्यादा टेक्नोलॉजी को अहमियत देता है। टेक्नोलॉजी चूंकि कमाऊ और तात्कालिक होती है इसलिए उसमें सहज आकर्षण और रुचि पैदा होती है। हमारे मौजूदा शासकों की विज्ञान-विषयक चिंता भी यही है। चीन तकनीक में भारत और कुछ मामलों में अमेरिका से भी आगे निकल गया है तो पड़ोसी होने के नाते भारत के लिए यह चिंता की बात जरूर है लेकिन इसका स्थाई मुकाबला तात्कालिक चिंताओं से नहीं हो सकती। अर्थशास्त्री और व्यापारिक नजरिए से भारत में विज्ञान के विकास का सपना देखना अच्छा है लेकिन यह दूरगामी समाधान नहीं दे सकता। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यूनेस्को भी सभी के लिए वैज्ञानिक एवं तकनीकी साक्षरता (एसटीएल) की वकालत करता है। इसके तहत प्रत्येक नागरिक को विज्ञान की आधारभूत प्रक्रिया से परिचित कराया जाता है। भारत में जहां सामान्य साक्षरता की ही स्थिति अच्छी नहीं है वहां विज्ञान साक्षरता की बात कैसे की जा सकती है? वैसे भी भारत में सामाजिक महत्व के विज्ञान विषयों से जुड़े मुद्दे जैसे बड़े बांध, पर्यावरण, परमाणु ऊर्जा, सौर ऊर्जा आदि को समझना बेहद जरूरी है। महज व्यापारिक लाभ या कूटनीतिक प्रतिस्पर्धा के लिए विज्ञान के नाम पर तकनीक की बात करने से भारत की विज्ञान आवश्यकता पूरी नहीं होगी। इसे पूरी तरह स्वदेशी बनाना होगा। विज्ञान के विकास के नाम पर पश्चिमी वैज्ञानिक जूठन से परहेज करना होगा। ❑

शिक्षा का चिन्ताजनक चित्र

इसमें संदेह नहीं कि सूचना तकनीक के क्षेत्र में भारतीय प्रतिभाओं ने दुनिया भर में अपनी क्षमता साबित की है। लेकिन इसके बरक्स शुरुआती पढ़ाई के मामले में हमारा देश दुनिया के तिहत्तर देशों में से बहत्तरवें नंबर पर है तो यह हमारी समूची शिक्षा-व्यवस्था पर एक गंभीर सवालिया निशान है। ओईसीडी यानी आर्थिक सहयोग और विकास संगठन की ओर से पीआईएसए यानी अंतरराष्ट्रीय विद्यार्थी मूल्यांकन कार्यक्रम के तहत आयोजित जांच-परीक्षा में भारत को दुनिया भर में सबसे नीचे से दूसरे पायदान पर जगह मिली है। पंद्रह साल की उम्र तक के इन देशों के बच्चों के पढ़ने, गणित और विज्ञान से जुड़े मूल्यांकन में भारत केवल किर्गिस्तान से आगे रहा। यह स्थिति तब है जब इस आयोजन में शामिल होने वाले विद्यार्थियों का चुनाव सरकार ने तमिलनाडु और हिमाचल प्रदेश से किया था, जहां स्कूली पढ़ाई का स्तर अन्य राज्यों से बेहतर माना जाता है। इसके पीछे उम्मीद शायद यह रही होगी कि चुने गए विद्यार्थी शिक्षा और विकास की चमकदार तस्वीर पेश कर पाएंगे। लेकिन इन नतीजों के बाद अंदाजा लगाया जा सकता है कि इन दोनों राज्यों के अलावा दूसरे इलाकों की हकीकत क्या होगी। दूसरी ओर, इस मूल्यांकन में चीन के विद्यार्थी पढ़ने से लेकर गणित और विज्ञान में अव्वल आए।

पिछले पांच-छह सालों में ऐसी कई रपटें आ चुकी हैं जो प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता के बेहद दयनीय स्तर का बयान करती हैं। लेकिन ऐसी कोई खबर नहीं आई कि सरकार इसमें सुधार के लिए कुछ ठोस करने जा रही है। उलटे यहां सरकारी स्कूलों में पढ़ाई-लिखाई के हालात को देख कर ऐसा लगता है कि गुणवत्ता की कसौटी पर बेहतर शिक्षा मुहैया कराने को लेकर चिंता करना सरकार ने शायद छोड़ दिया है। दूसरी ओर, कथित अच्छी शिक्षा तक केवल अच्छी आर्थिक हैसियत वाले तबकों की पहुंच है। इसमें भी एक नई स्थिति लगातार यह बनती जा रही है कि बड़े शहरों या कस्बों की बात तो दूर, गांवों तक में ज्यादातर निजी स्कूल अंग्रेजी माध्यम वाले हो गए हैं। पर पढ़ाई-लिखाई का स्तर क्या है, यह किसी से छिपा नहीं है। शुरूआती कक्षाओं के लिए खासतौर पर वैसे प्रशिक्षित शिक्षकों की जरूरत होती है, जो बाल-मनोविज्ञान को समझते हुए अपने पढ़ाने के तरीके और बच्चों में सीखने की क्षमता विकसित करने के मामले में प्रयोगधर्मी हों। लेकिन जहां कम से कम वेतन पर शिक्षक रखने वाले निजी स्कूलों में यह तथ्य कोई खास महत्त्व नहीं रखता, वहीं कई राज्य सरकारें खुद प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति के बजाय पैरा-टीचर या शिक्षा-मित्र के नाम से अर्ध-कुशल लोगों की भर्ती को तरजीह देने लगी हैं, ताकि कम पारिश्रमिक में शिक्षक की खानापूर्ति की जा सके। इसके अलावा, बहुत सारे सरकारी स्कूलों में बुनियादी सुविधाओं की कमी है। शिक्षक-विद्यार्थी के अपेक्षित अनुपात का पालन भी बहुत कम जगह दिखाई देगा। ऐसे में शैक्षिक गुणवत्ता की कितनी उम्मीद की जा सकती है! विडंबना यह है कि एक ओर शिक्षा के अधिकार का ढिंढोरा पीटा जा रहा है और दूसरी ओर लगातार शैक्षिक बदहाली की बेहद चिंताजनक रपटें आ रही हैं। इस वैश्विक जांच-परीक्षा के नतीजे हमारे देश के नीति-निर्माताओं के सामने यह तीखा सवाल छोड़ते हैं कि शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित किए बगैर क्या देश के बेहतर भविष्य के बारे में आश्वस्त हुआ जा सकता है!

रुक्टा (राष्ट्रीय) का 50वाँ स्वर्ण जयंती अधिवेशन कोटा में सम्पन्न

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ राष्ट्रीय का 50वाँ स्वर्ण जयंती अधिवेशन माँ भारती सीनियर सैकण्ड्री स्कूल कोटा में सम्पन्न हुआ। जिसमें राज्य के राजकीय महाविद्यालय, गैर राजकीय महाविद्यालय व विश्वविद्यालय के लगभग 400 शिक्षकों ने भाग लिया। 14 जनवरी को प्रातः माँ सरस्वती के सम्मुख दीप प्रज्ज्वलन व माल्यार्पण कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री घनश्याम तिवाड़ी, उपनेता प्रतिपक्ष व श्री अरुण चतुर्वेदी, प्रदेश भाजपा अध्यक्ष ने उद्घाटन किया। स्वागत अध्यक्ष श्री महेश विजय व आयोजन अध्यक्ष प्रो. सुरेशचन्द राजोरा ने सभी अतिथियों का स्वागत किया। रुक्टा (राष्ट्रीय) अध्यक्ष डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने राज्य की वर्तमान शैक्षिक स्थिति का वर्णन करते हुए शैक्षिक उन्नयन के विभिन्न आयामों का वर्णन किया।

महामंत्री डॉ. मधुरमोहन रंगा ने संगठन की विभिन्न संगठनात्मक गतिविधियों को बताते हुए शिक्षकों की विभिन्न लम्बित समस्याओं के लिए संगठन के प्रयासों का उल्लेख किया। मुख्य अतिथि श्री घनश्याम तिवाड़ी ने कहा कि शिक्षा के अनियंत्रित विस्तार को रोकने के लिए निष्पक्ष नियामक आयोग बनाया जाना चाहिये, साथ ही संस्कार युक्त शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। श्री अरुण चतुर्वेदी ने कहा कि समाज की अपेक्षाओं को ध्यान में रख कर शिक्षा से संबंधित योजना बनाई जानी चाहिए। मुख्य अतिथि व कार्यक्रम अध्यक्ष के साथ शैक्षिक महासंघ के महामंत्री प्रो. जे.पी. सिंघल ने स्मारिका विमोचन किया। इस अवसर पर संगठन का प्रतीक चिह्न का भी लोकार्पण किया गया। आयोजक सचिव डॉ. दिलीप गोयल ने सभी का आभार व्यक्त किया, कार्यक्रम का संचालन डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने किया। अपराह्न देराश्री स्मृति व्याख्यान माला में प्रो. संतोष पाण्डे ने कहा कि शिक्षा पर समाज का नियंत्रण होना चाहिए व उसे उचित दिशा राज्य प्रदान करे। उन्होंने कहा कि शिक्षा प्रदान करना व्यवसाय नहीं, सेवा होनी चाहिए। कार्यक्रम अध्यक्ष प्रो. फूलचन्द भिण्डा ने एकात्मक शिक्षा नीति की आवश्यकता के साथ शिक्षा में नैतिकता, आध्यात्मिकता पर जोर दिया। शाम को प्रतिनिधि सभा की बैठक आयोजित की गई।

15 जनवरी को प्रातः शैक्षिक संगोष्ठी का आयोजन किया जिसका विषय उच्च शिक्षा के उन्नयन में सूचना प्रौद्योगिकी की उपादेयता पर कार्यक्रम मुख्य अतिथि, सहसंयोजक, विश्व विभाग, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के श्री रविकुमार जी थे। उन्होंने कहा कि बायनरी सिस्टम का उल्लेख वेदों में भी है एवं यहीं से वैज्ञानिकों ने इसे सूचना प्रौद्योगिकी के लिए उपयोग में लिया। शैक्षिक संगोष्ठी में डॉ. बालकृष्ण योगी, डॉ. सम्पूर्णानन्द राकेचा, डॉ. नारायण लाल गुप्ता व डॉ. योगेन्द्र भानू ने विचार व्यक्त किये। खुले सत्र में महामंत्री डॉ. मधुरमोहन रंगा ने वार्षिक प्रतिवेदन पढ़ा जिसे साधारण सभा ने सर्वसम्मति से अनुमोदन किया। महामंत्री ने 30 जून 2011 को समाप्त वित्तीय वर्ष का लेखा जोखा भी प्रस्तुत किया। जिसे भी साधारण सभा ने अनुमोदित किया। खुले सत्र में उच्च शिक्षा के आधार मूल ढांचे में परिवर्तन व शोध को समाज व स्थान से जोड़ने संबंधी प्रस्ताव पारित किये गये। समारोप से पूर्व राज्य के सेवा निवृत्त शिक्षकों का सम्मान दुपट्टा, श्रीफल व स्मारिका प्रदान कर किया गया। समारोप सत्र में श्री रविकुमार जी का मार्गदर्शन रहा, उन्होंने कहा कि संस्कृत सबसे प्राचीन भाषा व ज्ञान का भण्डार है। आज विश्व में इस भाषा का प्रचार व प्रसार हो रहा है। आयोजन सचिव व संगठन महामंत्री ने सभी का आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम राष्ट्रगान के साथ सम्पन्न हुआ।

शिवगंज में मनाया संकल्प दिवस

पोसालिया कस्बे की राजकीय प्राथमिक विद्यालय रातेला में गत 15 जनवरी को राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) उप शाखा शिवगंज ने प्रधानाचार्य भंवरसिंह के मुख्य आतिथ्य व जिलाध्यक्ष छगनलाल माली की अध्यक्षता में समारोह पूर्वक संकल्प दिवस मनाया।

सरस्वती वंदन पूजन के पश्चात् उपशाखा अध्यक्ष शंकरलाल सोलंकी ने सभी संभागियों का स्वागत अभिनंदन करते हुए कहा कि विश्व गुरु कहलाने वाला भारत देश आज विदेशी उत्पादों का गुलाम बनता जा रहा है। सभी छात्रों को पास करने की नीति से शैक्षिक स्तर गिरता जा रहा है। संगठन मंत्री तुलसीराम यादव ने कहा कि सरकार ने शिक्षक के उपर अतिरिक्त कार्यों का बोध लादकर अपने मूल उद्देश्य से विमुख होने को मजबुर कर दिया है। सरकार नहीं चाहती है कि सरकारी स्कूलों में पढ़ाई हो। ऐसी विकट परिस्थितियों में भी अपने दायित्व को निभा कर अपने संगठन का सदस्य होने की छाप समाज में छोड़ने का आह्वान किया। प्रधानाचार्य सुनिल व्यास ने संस्कृति, माता-पिता और गुरूजनों की आज्ञा पालन को शिरोधार्य मानकर शिवाजी जैसे देश भक्त नागरिक निर्माण में शिक्षक की भूमिका की महत्ती आवश्यकता जताई।

इस अवसर पर प्रमुख वार्ताकार रामचंद्र रावल ने कहा कि अपने कर्त्तव्य का हमें पता होना चाहिए। शिक्षक संघ राष्ट्रीय के सदस्य होने के नाते हम छात्रों में देश भक्ति की भावना पैदा करने के साथ अच्छे नागरिकों का निर्माण करें। जिला मंत्री गोपाल सिंह राव ने सामाजिक सरोकारों में सहभागित्व के साथ कर्त्तव्य पालन करने को कहा। जिलाध्यक्ष माली ने माता-पिता, राष्ट्र-छात्र, विद्यालय और राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य निर्वहन की अपील की। मुख्य अतिथि भंवरसिंह ने कर्त्तव्य पालन के साथ अधिकार प्राप्त करने की बात कही। उपशाखा मंत्री दिनेश रावल ने आभार जताया। मंच संचालन भरत कुमार रावल ने किया।

बड़ौदा के महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ द्वारा संगोष्ठी आयोजित

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ की ओर से विश्वविद्यालय के अध्यापकों के लिए दिनांक 9 जनवरी 2012 के दिन 'प्लान योर कॅरीयर' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। इसमें छठे वेतन आयोग के अनुसार यू.जी.सी. एवं ए.आय.सी.टी.ई. द्वारा अध्यापकों के लिए निर्दिष्ट नियुक्ति, पदोन्नति एवं ए.पी.आई. (एकेडेमिक परफोर्मन्स ईन्डीकेटर) इत्यादि के संदर्भ में व्याख्यानों का आयोजन किया गया था।

कार्यक्रम के प्रारंभ में नवनियुक्त कुलपति प्रो. योगेश सिंह ने प्रेरणात्मक उद्‌बोधन किया। उन्होंने 'राष्ट्र के हित में शिक्षा, शिक्षा के हित में शिक्षक एवं शिक्षक के हित में समाज' इस त्रिसूत्र के संदर्भ में शिक्षकों के दायित्व एवं भूमिका के बारे में विस्तृत रूप से कहा। यहाँ उन्होंने शिक्षकों को राष्ट्रविकास में उपयोगी संशोधन करने को प्रेरित करते हुए कहा कि ई. 1600 में भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के बाद से लगातार 400 साल तक विश्वभर के देशों में अनेक क्षेत्रों में नई खोज एवं संशोधन हुए लेकिन इस यात्रा में भारत केवल मूकदर्शक ही बना रहा और इसके लिए उन्होंने लॉर्ड मेकाले की शिक्षा पद्धति की आलोचना की। उन्होंने कहा कि अब संशोधन के क्षेत्र में भारत को नेतृत्व करना चाहिए और इसलिए ही यू.जी.सी. के 2010 के नीति नियमों में संशोधनों को विशेष प्राधान्य दिया गया है। अत: शिक्षकों को संशोधन प्रवृत्ति में योगदान देने के लिए जागृत किया। लॉर्ड मेकाले की शिक्षा पद्धति के भयावह परिणाम की समाज पर विपरीत असर का चित्रण करते हुए शिक्षकों को यु.जी.सी., ए.आय.सी.टी.ई. एवं जी.ओ.जी. के नये नियमों के अनुसार राष्ट्र के हित में शिक्षा हो ऐसी दिशा में अपने संशोधन करने के लिए प्रेरित किया।

तत्पश्चात् डॉ. अमित धोलकिया ने शिक्षकों को नये नियमानुसार मिलने वाली छुट्टीयों के संदर्भ में 'पावर प्वाईंट प्रेजेंटेशन' प्रस्तुत किया। यू.जी.सी. के नये नियमों के अनुसार व्यावसायिक, व्यक्तिगत एवं वैद्यकीय कारणों से मिलने वाली छुट्टी के बारे में विस्तार से जानकारी दी। यू.जी.सी. के द्वारा दी गई चाइल्ड केयर की दो साल की छुट्टी और मेटरनिटी छुट्टी में किये गए परिवर्तन के बारे में जानकारी दी।

डॉ. प्रज्ञनेश शाह ने 'कॅरीयर अडवान्समेंट रुल्स' के संदर्भ में असिस्टेंट प्रोफेसर से लेकर सीनियर प्रोफेसर तक की पदोन्नति के छ: विभिन्न चरणों के लिए आवश्यक समय अवधि, शैक्षिक योग्यताएँ एवं उपलब्धियों के बारे में विस्तार से बताया।

प्रो. जी.सी. महेश्वरी ने कार्यक्रम के अंत में 'एकेडमिक परफोर्मन्स इडीकेटर' (ए.पी.आई.) के संदर्भ में अपने व्याख्यान में शैक्षणिक एवं संशोधनात्मक प्रवृत्तियों की ए.पी.आई. की गिनती कैसे करनी है उस विषय में बताया। अध्ययन, अध्यापन, अन्य प्रवृत्तियाँ, संशोधन, लेखन, सेमिनार, शिविर, प्रशासन, परीक्षाएँ, एडमिशन, रिसर्च प्रोजेक्ट के साथ जुड़े हुए ए.पी.आई. के मूल्य की समीक्षा की।

सभी व्याख्यानों के अंत में अध्यापकों ने प्रश्न पूछकर अपनी जिज्ञासा का समाधान किया। इस कार्यक्रम में उपस्थित विविध संकायों के अधिष्ठाता, विभागाध्यक्ष, पूर्व एवं नवनियुक्त सेनेट, सिन्डीकेट सदस्यों का पुष्पगुच्छ से स्वागत किया गया। उपरोक्त विषयों की विस्तृत जानकारी के लिए उपस्थित 375 अध्यापकों को यूजीसी, ए.आय.सी.टी.ई. एवं गुजरात सरकार के परिपत्र एवं नीति नियमों के दस्तावेजों का समावेश करती हुई सी.डी. भेंट दी गई। महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय शैक्षिक संघ के अध्यक्ष डॉ. प्रज्ञनेश शाह एवं महामंत्री डॉ. विश्वजीत चक्रवर्ति के मार्गदर्शन में डॉ. जगदीश सोलंकी और डॉ. हरिभाई कटारिया ने संपूर्ण कार्यक्रम का संयोजन किया। कार्यक्रम के अंत में उपस्थित सभी अध्यापकों ने साथ में प्रीतिभोज किया।

भारतीय युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत विवेकानन्द-योगी रमण नाथ

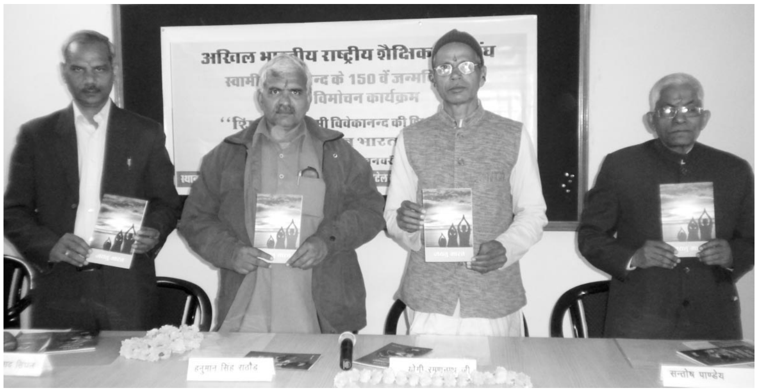

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ ओर से राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के सभागार में स्वामी विवेकानन्द जी के 150 वें जन्मदिन के अवसर पर विवेकानन्द की शिक्षा दृष्टि पर आधारित पुस्तक 'शिक्षा' तथा 'जयतु भारत' पुस्तकों का विमोचन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि योगी रमण नाथ ने अपने उद्‌बोधन में कहा की स्वामी विवेकानन्द जी ने मात्र 39 वर्ष की आयु में पूरे विश्व को जो दर्शन दिया वह आज भी प्रासंगिक है। भारत को आज एक युवा राष्ट्र के रूप में पहचाना जा रहा है ऐसे में चिर युवा व्यक्तित्व स्वामी विवेकानन्द ही उसकी प्रेरणा का सर्वोत्तम स्त्रोत हो सकता है। स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दू संस्कृति को उस समय विश्व मान्यता दिलवाई, जब भारतीयों का आत्म विश्वास रसातल में गया हुआ था। स्वामी विवेकानन्द के आध्यात्मिक प्रवाह के साथ साथ राष्ट्रीयता के शंखनाद ने भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में नई जान फूंक दी थी।

पुस्तक के लेखक रा.स्व.संघ के उत्तर पश्चिम क्षेत्र कार्यवाह हनुमान सिंह राठौड़ ने कहा की स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा की परिभाषा 'मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है' दी थी। ज्ञान मनुष्य में स्वभाव सिद्ध है, कोई ज्ञान बाहर से नहीं आता सब अन्दर ही है। मनुष्य का 'सीखना' वास्तव में 'आविष्कार करना' है। आविष्कार का अर्थ है मनुष्य का अपनी अनन्त ज्ञान स्वरूप आत्मा के उपर से अविद्या के आवरण को हटा लेना।

शैक्षिक महासंघ के प्रकाशन प्रकोष्ठ प्रमुख प्रो. संतोष पाण्डेय ने कार्यक्रम की भूमिका बताते हुये कहा की अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ वर्ष पर्यन्त शिक्षा और शिक्षा से संबंधित विषय तथा महापुरूषों के जीवन इत्यादी पर कार्यक्रम आयोजित करता रहता है। सामाजिक सरोकार से जुड़े विभिन्न विषयों पर समाज जागरण का कार्य भी समय समय पर किया जाता है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो. जे. पी. सिंघल (महामंत्री, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) ने की। श्री सिंघल ने महापुरूषों की जयन्तियों पर ऐसी संगोष्ठियों की आवश्यकता बताते हुए कहा की विवेकानन्द के 150 वें जन्मदिन पर यह विचार करने की आवश्यकता है की हम उनके दिखाए मार्ग पर कितना आगे बढ़ पाये।

कार्यक्रम में राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर, रूक्टा राष्ट्रीय के प्रदेशाध्यक्ष ग्यारसीलाल जाट, शिक्षक संघ राष्ट्रीय के अध्यक्ष प्रहलाद शर्मा, भा.म.स. के जयन्ति लाल, भा.म.स. के पूर्व प्रदेश संगठन मंत्री धनप्रकाश त्यागी तथा रा.स्व.सं. जयपुर प्रांत के सह प्रांत प्रचारक शिवलहरी, पाथेय कण पाक्षिक के ओमप्रकाश, सेवा भारती जयपुर के प्रान्तीय संगठन मंत्री घनश्याम आदि प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। कार्यक्रम का संयोजन भरत शर्मा, आभार प्रदर्शन बसन्त जिन्दल व संचालन नौरंग सहाय भारती ने किया।

हिमाचल प्रदेश में कर्त्तव्य बोध के कई कार्यक्रम सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की प्रेरणा से प्रदेश के 5 जिलों में कर्तव्य बोध के कार्यक्रम आयोजित किए। 16 जनवरी को कर्तव्य बोध दिवस पौंटासाहिब जिला सिरमौर मे आयोजित किया गया। 17 जनवरी को कर्त्तव्य बोध दिवस रा.व.मा.पा. नालागढ़ जिला सोलन में आयोजित किया। 18 जनवरी, 2012 को कर्तव्य बोध दिवस रा.व.मा.पा. (छात्रा) हमीरपुर जिला हमीरपुर मे आयोजित किया गया। 19 जनवरी, 2012 को कर्तव्य बोध दिवस महादेव मन्दिर, धनोटू, सुन्दरनगर, जिला मण्डी में किया गया। इन सभी कार्यक्रमों में मुख्यअतिथि श्री बजरंग प्रसाद मजेजी राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ थे।

इन कर्त्तव्य बोध दिवसों के उपलक्ष्य पर जगवीर चन्देल व चन्द्र देव ठाकुर ने भारतीय संस्कृति एवम् इतिहास को पाठ्यक्रम में शामिल करने पर बल दिया। अतिरिक्त महामन्त्री अशोक कुमार ने कहा कि यह वक्त आत्मचिन्तन का है। हमने सरकारी स्कूलों में गिरते बच्चों की संख्या पर चिन्तन करना होगा।

प्रदेशध्यक्ष पवन मिश्रा ने संगठन के उद्देश्य व कार्यप्रणाली की चर्चा करते हुए कहा, कि देश में शिक्षा के गिरते स्तर, शैक्षिक उन्नयन हेतु तथा शिक्षकों के प्रति समाज के दृष्टिकोण में परिवर्तन हेतु स्वयं शिक्षकों को कर्त्तव्य निर्वहन हेतु आत्मचिन्तन करना होगा। शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष बजरंग प्रसाद मजेजी ने इस अवसर पर शिक्षकों को सम्बोधित करते हुए कहा शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में सुधार एवम् कर्त्तव्य निष्ठा से शिक्षक का सम्मान बढ़ेगा। उन्होंने कहा हमारे संगठन की मान्यता है कि 'राष्ट्र के हित में शिक्षा, शिक्षा के हित में शिक्षक, शिक्षक के हित में समाज के ध्येय की सफलता के लिए आवश्यक है कि अध्यापक अपने कर्त्तव्यों का पालन करें तथा विद्यार्थी के हित की चिन्ता करें। श्री बजरंग प्रसाद मजेजी की अध्यक्षता में हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ का एक शिष्ट मण्डल माननीय मुख्यमंत्री प्रेम कुमार धूमल से मिला तथा उन्हें कर्तव्य बोध पखवाड़े के बारे में बताया तथा मुख्यमंत्री जी ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की इस पहल को बहुत सराहा। मुख्यमंत्री जी ने कहा कि कोई शैक्षिक संगठन इस तरह मांगों के अलावा सामाजिक चिन्तन भी करता है यह एक स्वागत योग्य कदम है।

जोधपुर में कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम मनाया

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षक महासंघ के आह्वान पर राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) जोधपुर द्वारा दिनांक 12 जनवरी से 23 जनवरी, 2012 तक कर्तव्य बोध कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसका समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह दिनांक 23 जनवरी 2012 को सुभाष चन्द्र बोस जयन्ती पर आदर्श विद्या मन्दिर, सरस्वती नगर में मुख्य अतिथि पूर्व कुलपति अमरसिंह फड़ौदा एवं विशिष्ठ अतिथि श्री बाबूलाल पालीवाल एवं नारायण सिंह राव द्वारा सुभाषचन्द्र बोस के चित्र पर माल्यार्पण कर प्रारम्भ हुआ।

मुख्य अतिथि श्री अमरसिंह फड़ौदा ने अपने सम्बोधन में कहा कि शिक्षकों को समाज में अपने दायित्वों को नहीं भूलना चाहिए। साथ ही सरकार को भी शिक्षकों को शिक्षण के अलावा अन्य कार्यों में नहीं लगाना चाहिए। श्री फड़ौदा ने बताया कि शिक्षक ही विवेकानन्द और सुभाषचन्द्र बोस के व्यक्तित्व को बच्चों में डालकर नवसमाज का निर्माण कर सकता है। विशिष्ट अतिथि बाबूलाल पालीवाल ने अपने सम्बोधन में कहा कि विद्यार्थी ही कल का भविष्य है एवं शिक्षक उसका भविष्य निर्माता है। अत: शिक्षक अपने दायित्वों का निर्वहन कर्तव्यनिष्ठा के साथ करें। साथ ही विशिष्ट अतिथि नारायणसिंह राव ने कहा कि हम विवेकानन्द एवं बोस के पदचिन्हों पर चलकर अच्छे समाज का सपना साकार कर सकते हैं। जिलाध्यक्ष एवं कार्यक्रम संयोजक भंवरलाल काला ने विद्यार्थियों एवं शिक्षकों की प्रतियोगिताओं तथा गतिविधियों पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम के दौरान प्रदेश उपाध्यक्ष किशन बाघमार, मण्डल संयुक्त मंत्री मोहनसिंह भाटी, जिलामंत्री श्यामसिंह सजाड़ा, वरिष्ठ कार्यकर्ता नत्थाराम रिणवा, सुमेरसिंह सिसोदिया, रूपाराम रलिया, विशाल शर्मा ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

कार्यक्रम के अन्त में अतिथियों द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सांत्वना पुरस्कारों का वितरण किया गया।

दिल्ली में कर्तव्य बोध कार्यक्रम आयोजित हुआ

दिल्ली अध्यापक परिषद का कर्त्तव्य बोध कार्यक्रम मॉडल स्कूल, नजफगढ़ में आरम्भ हुआ। इस अवसर पर उपस्थित अजय अवस्थी, जयभगवान गोयल, एन.डी. शर्मा, एस.एन. गुप्ता, शिव कुमार, जंग बहादुर सिंह, DDE SW 'B' द्वारा दीप प्रज्ज्वलन के साथ उद्घाटन किया गया।

सरस्वती वंदना के पश्चात् रूपराम सहरावत उपाध्यक्ष दिल्ली प्रांत ने अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ पर प्रकाश डाला। तत्पश्चात अजय अवस्थी, शिक्षा प्रमुख, विद्या भारती दिल्ली प्रान्त ने शिक्षक के प्रमुख उत्तरदायित्व के संदर्भ में प्रकाश डालते हुए हमारे कर्त्तव्य व जिम्मेदावरियों से अवगत कराया। जयभगवान गोयल, अध्यक्ष दिल्ली अध्यापक परिषद ने कर्त्तव्य के कर्म को स्पष्ट करते हुए जीवन में हमारे कर्तव्य व आज की परिस्थितियों में शिक्षा का महत्व व राष्ट्रीय भावना हम सभी के मन में होनी चाहिए। हम सभी अपने व विद्यालय के बच्चों में ऐसे संस्कार डालें कि सभी ठीक रास्ते पर चलें और धर्म के मार्ग पर चल अर्थ कमाएँ।

महेश शर्मा द्वारा कर्तव्य बोध दिवस पर समस्त उपस्थित सदस्यों द्वारा संकल्प कराया। शिवकुमार, विद्या भारती अखिल भारती मन्त्री ने आज के समय में स्वयं की अवस्था व व्यवस्था के साथ अपने कर्त्तव्य का निर्धारण तथा प्रेरणा स्रोत लेने व देने के संदर्भ में प्रकाश डाला। जंग बहादुर ने कर्तव्य बोध को सृजन का तराजू बताया, जिसमें एक तरफ अधिकार व एक तरफ कर्त्तव्य का पलड़ा है ये दोनों ही जीवन का संतुलन है।

एन.डी. शर्मा ने शिक्षा का मानव के लिए महत्व व अध्यापक का छात्र के जीवन में स्तर भगवान के समान होता है। शिक्षा के अन्य मूल्यों पर प्रकाश डाला। एस.एन. गुप्ता ने अपने पूर्व भविष्य पर प्रकाश डालते हुए शिक्षा की महत्ता व जीवन में शिक्षा का संतुलन की आवश्यकता पर प्रकाश डाला।

भावी पीढ़ी का निर्माण करते हैं शिक्षक

यूआईटी सचिव जगवीर सिंह ने कहा कि शिक्षक की ओर से किए जा रहे कार्यक्रमों से शिक्षकों की सोच में बदलाव आएगा एवं शिक्षक अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक रहेगा। इससे देश व समाज का सर्वांगीण विकास होगा। वे 15 जनवरी 2012 को आबू रोड के गुजराती धर्मशाला में आयोजित शिक्षक संघ राष्ट्रीय के कर्तव्य बोध कार्यक्रम को संबोधित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि शिक्षक देश की भावी पीढ़ी का निर्माण करता है। इससे उसका उत्तरदायित्व व जिम्मेदारी बढ़ती है। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए नरेश पुरोहित ने कहा कि शिक्षकों को वर्तमान परिस्थितियों का आत्मसात करते हुए अपने कर्तव्य का निर्वहन करना चाहिए। प्रदेश उपाध्यक्ष मोहन पुरोहित ने कहा कि शिक्षक छात्रों के सर्वांगीण विकास व समाज के उत्थान में अपनी भूमिका का ईमानदारी से निर्वहन करे।